अर्जुन सिंह
सांप्रदायिकता के खिलाफ एक आवाज़
सम्पादन : मदन मोहन गुप्त
260 more die in unabated violence
बंबई में हिंसा के भीषण तांडव में सैकड़ों लोग मारे गये
हिंसा की आग बुझाने अर्जुन सिंह सबसे पहले भोपाल आये
गुजरात में जगह-जगह
र्नाटक में भ
से 41 लोगों की मौत
Arjun : Centre May consider debarring BJP

भारत के शिल्पी पंडित जवाहरलाल नेहरू जो अर्जुन सिंह के जीवन का आदर्श बने, उनके साथ श्री अर्जुन सिंह, श्रीमती सरोज सिंह (प्रथम पंक्ति में) मध्यप्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल श्री हरी विनायक पाटस्कर, भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू, श्री सी. सुब्रमणियम व मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री भगवन्तराव मंडलोई (मध्य पंक्ति में) तीन के वर्तमान राष्ट्रपति व म.प्र. के गौरव डॉ. शंकर दयाल शर्मा, उनकी स्वर्गीय पुत्री गीतांजली शर्मा व श्रीमती विमला शर्मा।

(एक ऐतिहासिक चित्र अर्जुन सिंह जी की एलबम से)

सर्वाधिकार सुरक्षित : मदनमोहन गुप्त
कला एवं सज्जा : अविनाश
मूल्य : १ रु. ५० पैसे
प्रथम संस्करण : २५,००० प्रतियाँ १९९२
प्रकाशक एवं मुद्रक : श्री पब्लिकेशन प्रा. लि.
३२, महाराणाप्रताप नगर, भोपाल

यह कृतित्व .....

भारत के शान्त सरल जीवन में आज की राजनीति ने जैसे एक बवंडर पैदा कर दिया है। इस स्वाधीन देश के इतिहास में राजनैतिक अस्थिरता का जो स्वरूप वर्तमान में उभरा है वह किसी दल विशेष के सत्ता में रहने या न रहने मात्र को ही इंगित नहीं करता बल्कि वह पूरे भारत को एक ऐसे गर्त में धकेले दे रहा है जहां गिरने के बाद भारत की वर्तमान संवैधानिक, एकता और धर्मनिरपेक्ष स्वरूप के बचने की संभावनाएं ही नगण्य हो जाएंगी। धर्मांधता के अश्व को कुछ राजनीतिज्ञों ने जिस वेग से दौड़ा दिया है अब उसकी वल्गाएं थामे रखने की ताकत उन दलों के हाथों में नहीं है क्योंकि अब धर्मांधता का उन्माद लोगों के सिरों पर चढ़कर बोल रहा है।

महात्मा गांधी, पं. जवाहरलाल नेहरू जैसे वटवृक्ष भारत की राजनीति से कब के तिरोहित हो चुके हैं। श्रीमती इंदिरा गांधी जैसा सबल मनोरथ वाला नेतृत्व या फिर राजीव गांधी जैसा ओजस्वी व्यक्तित्व आज भारत के किसी भी राजनीतिक दल के पास नहीं है। लेकिन यह भी सत्य है कि राजनीति तो कहीं न कहीं, किसी न किसी में अपना आधार खोज ही लेती है और जनमानस भी किसी न किसी राजनेता में अपना सम्बल तलाश कर उसे राजदण्ड सौंपता ही है।

भारतीय राजनीति की इस पथरीली जमीन पर आज जो भी चेहरे हमारे सामने हैं, उस भीड़ में एक अलग व्यक्तित्व लिए अर्जुन सिंह जी का दृढ़ निश्चयी चेहरा देश के सामने बार-बार उभरता है। यह चेहरा तमाम अवरोधों और विरोधों के बावजूद देश की राजनीति को और उससे प्रभावित होने वाले 84 करोड़ भारतीयों को शांति, एकता और विकास के पथ पर ले जाने के लिए सतत् चिन्तन में डूबा रहता है और हमेशा इस बात को तरजीह देता है कि सांप्रदायिक सद्भाव बना रहे तथा पिछड़े, कमजोर तथा दलित वर्गों का विकास किसी भी मूल्य पर न रुके।

पत्रकारिता की लेखनी थामने के बाद राजनीतिज्ञों, बुद्धिजीवियों के बीच आना-जाना मेरे जीवन का जैसे अंग बन गया है। विभिन्न प्रधानमंत्रियों के साथ देश-विदेश की यात्राएं करते हुए मैं न केवल इस राष्ट्र का नेतृत्व करने वालों के विचारों से अवगत हुआ वरन् विदेश में राजनीतिज्ञों और वहां के जनमानस की हमारे देश के प्रति सोच और समझ भी मेरे सामने आई। इसी बहाव में बहता हुआ मैं अर्जुन सिंह के सानिध्य में आया, और जैसे-जैसे उन्हें सुनने-समझने के अंतरंग अवसर मिलते गए वैसे-वैसे मुझे इस बात का निश्चय होता गया कि यह व्यक्ति भले ही कितने ही राजनीतिक विवादों में क्यों न घिरा हो किन्तु यह व्यक्तित्व कभी भी इस देश के आदर्शों और शाश्वत मूल्यों के साथ छल नहीं कर सकता। मैंने पाया कि धर्म से अधिक उन्हें मानवीय मूल्यों की चिन्ता है और सत्ता की कुर्सी की अपेक्षा वे राष्ट्र की एकता और कांग्रेस की मजबूती के लिए अधिक प्रयासरत् हैं।

इसे शायद राजनीतिक विडम्बना ही कहा जायेगा कि श्री अर्जुन सिंह के गहन गम्भीर व्यक्तित्व में विकास और एकता की सम्भावनाओं का अजस्र स्रोत होने के बाद भी उनके बहुआयामी व्यक्तित्व का यह पक्ष देश की जनता के सामने दबा कर रखने के लिए उनके विरोधियों ने उन तमाम बातों की ओर बार-बार लोगों का ध्यान आकर्षित करने की कुचेष्टा की जो कि श्री सिंह के व्यक्तित्व को छूती भी नहीं है, या फिर... जो राजनीति की मरुभूमि पर चलने का अनचाहा आवश्यक अंग हैं।

पिछले लगभग चार दशकों से राष्ट्र सेवा का यह व्रती अपनी तमाम आलोचनाओं की ओर से मुंह मोड़े खामोशी से अपनी राह खुद बनाते अविरल गति से चलता ही रहा है, देश भक्ति के पथ पर। म.प्र. के तीन बार मुख्यमंत्री, पंजाब के राज्यपाल, कांग्रेस के उपाध्यक्ष, केन्द्र के संचार, वाणिज्य और मानव संसाधन एवं विकास मंत्री और कुछ अवधि तक लोकसभा में कांग्रेस ई पार्टी के नेता जैसी हर जिम्मेवारी को पूरे गौरव और सफलता के साथ निभाते हुए भी उन्होंने अपने साम्प्रदायिक सौहार्द्र के लक्ष्य को कभी भी विस्मृत नहीं किया जिसके कारण यह विचारक, यह राजनीतिज्ञ आज साम्प्रदायिक ताकतों का सबसे बड़ा प्रतिरोधी बनकर देश के सामने उभरा है।

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व और कृतित्व को उसके विचारों से ही जाना-परखा जा सकता है, क्योंकि जो भावनाएं मन-मस्तिष्क में होती हैं वे ही जाने-अनजाने विचार बनकर प्रस्फुटित होती रहती हैं और उन्हीं से मूल्यांकन होता है मानव की महानताओं का। श्री अर्जुन सिंह के विचार, जो विगत एक हजार दिनों में जनमानस के बीच समय-समय पर आए, या जिन विचारों ने उनकी लेखनी से जुबान पाई, या फिर वे विचार जो संसद के पटल पर रखे गये उन सबके कुछ मार्मिक अंशों और कुछ अखबारों की सुर्खिया को संजोया हैं मैंने इस पुस्तक में, ताकि हर विवाद से ऊपर उठकर एक सच्चाई जनता के सामने आ सके...वो सच्चाई, जो कि अर्जुन सिंह जी के दिलो-दिमाग में है भारत और भारतीयों के लिये..वह सच्चाई है अपने को सेवक मानते हुये मातृभूमि की निःस्वार्थ सेवा... गोस्वामी तुलसीदास ने भी इसी सच्चाई, इसी सेवा को **'सेवक धरम अतिकठोरा'** कहा...और यही सच्चाई, यही अदम्यता प्रतिबिम्बित और प्रतिध्वनित होती है साम्प्रदायिकता के खिलाफ अर्जुन सिंह की आवाज में। इसे ही लेकर इस पुस्तक की रचना हुई है।

सत्य उनके जीवन दर्शन का

अंतरमन जन्म जन्मान्तरों के संस्कार और भावनाओं को, उपलब्धियों व पीड़ाओं को अपने में चुपचाप संजोये चला जाता है। प्रत्येक व्यक्ति के अंतर में निहित होती हैं उसकी वे भावनाएं, उसकी वो कामनाएं जिनको लेकर वह अपने जीवन का तानाबाना बुनता है, देश, समाज,घर, परिवार, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक हर परिवेश में। समय की सरिता का बहाव हमें इतने वेग से जीवन भर बहाता रहता है कि हम कभी यह जानने का प्रयास भी नहीं कर पाते कि हमारे जीवन की किन भली-बुरी बातों और चाहतों को समेट लिया है हमारे अंतःकरण ने बिना हमें ही बताये। ये ही अंतर आत्मा में संजोयी बातें बिलकुल अक्षरशः सत्य के रूप में आ खड़ी होती हैं, प्रत्येक मनुष्य के सामने जब उसे अपने जीवन का बहाव रुकता सा प्रतीत होता है, इसे हम काल की निष्ठुरता या फिर कृपा जो भी मानें, इन क्षणों में कोई महात्मा हो या दुरात्मा, महान राजनैतिज्ञ हो या साधारण गृहस्थ कोई भी असत्य की अभिव्यक्ति नहीं कर सकता, न वाणी से, न लेखनी से क्योंकि तब काल पुरुष का रूप धारण कर उसका सारा जीवन और सम्पूर्ण जीवन का दर्शन ही उसके सामने खड़ा होता है। हम में से प्रत्येक के जीवन में ध्रुव सत्य का ये दिन जरूर ही आता है और अर्जुन सिंह जी के जीवन में भी आज से लगभग ढाई साल पहले 22 अक्टूबर 1990 की गो धूली वेला में ठीक ये ही घड़ी आ खड़ी हुई थी अस्पताल में हृदय की शल्य चिकित्सा के पहले, जब वे गंभीर रूप से बीमार थे। जहां सामान्य पुरुष ऐसे में घर परिवार की याद में अश्रुपात करते हैं या अपनों को जीवन में अर्जित उपलब्धियों का ब्यौरा देते हैं, वहीं इस मनीषी के अंतःकरण में उस कालवेला में भी सांप्रदायिकता से देश की रक्षा और राम जन्मभूमि तथा बावरी मस्जिद को लेकर हिंदू-मुस्लिमों के दिलों में बढ़ती हुई नफरत से एक झंझावात मच रहा था और काल पुरुष के रूप में जब अर्जुन सिंह जी के सामने आ खड़ा हुआ था उन के पूरे जीवन का दर्शन, तब ऐसे क्षणों में डगमगाते हाथों से दिल में कसक लिये हुये उन्होंने लिखा था **'मेरे राम,रहीम और ईसा तुम कहां हो'** ?उन के अंतःकरण से देश, धर्म, मानवता और ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को लिये जो सत्य जगत के सामने निःसृत हुआ, शायद वही संकट की उन घड़ियों में उनके जीवन के लिये संजीवनी बन गया। इससे बड़ा सत्य और कुछ नहीं लगा मुझे उनके जीवन दर्शन का और इसी लिये उनकी इसी लेखनी से आरंभ कर रहा हूं उनके विचारों का यह लघु ग्रंथ।

मेरे राम, रहीम और ईसा तुम कहां हो?

राम, तुम्हारी काया का आभास तो सबसे पहले अपनी मां की गोद में हुआ। तुम्हारे गुणों से प्रेम,करुणा, वात्सल्य, अनुशासन, कर्तव्य परायणता और आसुरी शक्तियों से संघर्ष करने की असीमित साहस की तस्वीर तो पांच छह वर्ष की उम्र में देखी जब संत तुलसीकृत रामायण देखने और सुनने का अवसर मिला। बाल राम, युवा राम और योद्धा राम- तीनों मूर्तियों का ओज और आत्मबल समान था और देश के करोड़ों हिन्दुओं की भांति, मेरे भी मानस पटल में सदैव-सदैव के लिए अंकित हो गई लेकिन मां की गोद में अवगत हुए गुणों से उन्हें कभी अलग नहीं कर सका।

सात बरस की उम्र में शिक्षा के लिए प्रयाग के सेंट पेरिस कैथोलिक कान्वेन्ट में बोर्डर की हैसियत से भरती होने पर दिनचर्या के रूप में प्रातः गिरजाघर जाना और प्रार्थना करना पड़ती थी। बहुत आश्चर्य हुआ भगवान ईसा मसीह को क्रास पर टंगे देखकर और कुछ दुख भी हुआ कि जिसे भगवान का इकलौता पुत्र मानते हैं, उन्हें ऐसी यातना क्यों सहनी पड़ी। भगवान जो सर्वशक्तिमान हैं, उन्होंने अपने पुत्र की रक्षा क्यों नहीं की। धीरे-धीरे ज्ञान हुआ कि ईसा मसीह भी क्रास पर उन्हीं गुणों के पालन व रक्षा के लिए चढ़ाए गए जिनके अनवरत पालन से राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा गया। भावना व

भ्रांति का अटूट मिश्रण हुआ और आत्मबल का प्रादुर्भाव हुआ।

इस्लाम धर्म के बारे में उर्दू पढ़ाने वाले मौलवी सा. से जानकारी मिली लेकिन जब उन्होंने कहा कि मैं आपको अल्ला-ताला की कोई तस्वीर नहीं दे सकता तो मुझे लगा किसके नाम या आकार के सहारे पवित्र कुरान शरीफ पढ़ा जा सकता है। उन्होंने मुझसे कहा, आप एक दफे इस्लाम की कुछ मौलिक बातें पढ़िए, तो गुरू की आज्ञा समझकर मैने पढ़ा और ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता गया, लगा कि यह सब तो वही है जो राम व ईसा से जुड़ी बातें हैं, गुण हैं। मौलवी सा. से तो मैंने यह बात नहीं कही। इस संकोच में कि कहीं उन्हें नागवार न गुजरे लेकिन जो हमारे निजी गार्जियन पं. बृजवासी लाल पांडे जी थे (जो दुर्भाग्य से अब नहीं हैं) उनसे मैंने जरूर कहा कि इस्लाम धर्म के प्रति श्रद्धा व समर्पण की भावना कैसे जागृत की जा सकती है जब उस धर्म के आदि पुरुष का मानवीय स्वरूप ही देखने को नहीं मिलता। पंडितजी ने जो उत्तर दिया उसने मुझे अपनी भारतीय विरासत का विराट दर्शन कराया और धर्म क्या है उसको सही रूप में समझने का अवसर दिया। उन्होंने कहा, प्रत्येक धर्म आस्था, विश्वास और कर्मठता का सुंदर समन्वय है। हिन्दू धर्म आस्थाओं का पुंज है, ईसाई धर्म विश्वासों की कसौटी पर खरा उतरने का अलौकिक अवसर है और इस्लाम धर्म कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में कर्मठता का प्रमाण देने का माध्यम है। कोई भी व्यक्ति अपनी निजी मान्यताओं व आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चाहे जो गढ़ता या बुनता रहे, लेकिन इनके बाहर जाकर धर्म का पालन नहीं कर सकता। उन्होंने कहा यही गीता में भगवान कृष्ण का अंतिम उपदेश है। इस घटना को हुए ४५ वर्ष बीत गए लेकिन आज भी एक-एक शब्द और उसका अर्थ-हृदय-पटल पर केवल अंकित ही नहीं है, इसी को अपनी समृद्ध विरासत व धरोहर मान कर मैंने जीवन के अनेक उतार-चढ़ाव पार किए। मंदिर हो, मस्जिद हो, गिरजाघर हो या गुरुद्वारा हो, कहीं भी परमात्मा के दयालु करुणामय व स्थित प्रज्ञ दर्शन करने में मुझे कोई दिक्कत महसूस नहीं हुई।

आज इस समृद्ध विरासत के बिखरने का खतरा उत्पन्न हो गया है। विडंबना यह है कि वह खतरा उन्हीं धर्मों के माध्यम से पैदा किया जा रहा है जिनके पाक सिद्धांतों से यह विरासत सदियों में निर्मित हुई थी। युग पुरुष महात्मा गांधी के चरण स्पर्श करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ था। राष्ट्रनायक पं. नेहरू के तेजस्वी हाथों ने मेरे कंधों को स्पर्श करके संघर्ष और बलिदान से उत्पन्न अजेय ऊर्जा स्थानांतरित की थी जिसके बल व प्रेरणा से राष्ट्रमाता श्रीमती इंदिराजी के संघर्षशील नेतृत्व में कई उत्तेजक क्षणों का अनुभव करने का अवसर मिला और आज भी देश की महान संस्था कांग्रेस में राजीव के अनुशासित सिपाही की हैसियत से सेवा व संघर्ष के अनवरत अभियान में लगे रहने की शक्ति मिली।

सहसा ५ अक्टूबर को मध्यान्ह इस सब पर विराम लगता दिखा। लेकिन प्रभु कृपा से ऐसा हुआ नहीं। आज सुबह मुझे बताया गया कि मेरे हृदय की शल्य-चिकित्सा करनी पड़ेगी। कोई भी शल्य-क्रिया चिंता का विषय बन जाती है, फिर हृदय की शल्य-चिकित्सा तो होनी ही चाहिए। हर मनुष्य के नाते मुझे भी थोड़ी चिंता है। लेकिन मुझे अंदर से प्रेरणा मिली कि कुछ जीवन का लेखा-जोखा भी तो कर डालो- एक तो व्यक्तिगत लेखा-जोखा होता है, उसमें मेरी दिलचस्पी बिलकुल नहीं है। उसे करने वाले दोस्त व दुश्मन दोनों काफी हैं। इसलिए सही ही होगा।

आज इन क्षणों में, इसके पूर्व कि बेहोशी दे दी जाए, मैं केवल राम, रहीम और ईसा को खोजना चाहता था और पूछना चाहता था कि कहां हो, जो मेरा प्यारा देश बिना पतवार के नाविक के सहारे इतिहास के भंवर की ओर तेजी से बढ़ता जा रहा है।

राम,तुम्हारे भक्तों की संख्या तो असंख्य है। उसमें निषादराज भी हैं, शबरी भी है और संत तुलसीदास भी हैं। आज के भक्तों के ये लोग आदर्श नहीं रहे। आज तो भगवन, इन विख्यात भक्तों ने यह भी नहीं सोचा कि आपने तो आसुरी शक्तियों के भयंकर प्रतीक रावण से, बिना रथ पर बैठे ही, संग्राम करके पराजित किया। आधुनिक भक्त तो आपके नाम से रथ बनाकर उस पर विराजमान होकर दिग्विजय के लिए निकल पड़े हैं- और वह भी विजय किसी आसुरी शक्ति के ऊपर नहीं, अपने ही देशवासियों के ऊपर। उन्हें कौन बताए कि संत तुलसी को राम चरित मानस रचने के पश्चात् इनाम के बतौर सम्राट अकबर ने मनसबदारी और बहुत साधन उपहार में भेजे थे। संत तुलसीदास का अकबर को उत्तर था- **"हम चाकर रघुवीर के, पढ़ो-लिखो दरबार। तुलसी अब क्या होएंगे नर के मनसबदार।"**

परंतु प्रभु, आज के राम भक्त तो नर क्या, पिशाचों की भी मनसबदारी करने को तत्पर हैं। मेरे अल्लाह, आज कर्तव्य की कर्मठता की कसौटी पर उतरने को बेताब होने वाले तुम्हारे भक्त अपनी आवाज की बुलंदगी को नाप रहे हैं- शायद कबीर के उस दोहे से वे परिचित नहीं हैं- **"चींटी के पग घुंघरू बाजे, तो तेरा मालिक सुनता है। ऊपर चढ़ कर बांग लगाए क्या तेरा मालिक बहरा है।"** आवाज की बुलंदगी नहीं उसकी गहराई की वकत होनी चाहिए।

मेरे ईसा मसीह, अपनी असीमित करुणा और विश्वास से उपजा दृढ़ संकल्प का अथाह सागर मेरे भारत में उड़ेल दो ताकि घृणा और द्वेष की धधकती ज्वाला शांत हो जाए और हम अपने गौरवमयी इतिहास की यात्रा निरंतर जारी रख सकें।

कोई भी धर्म व विश्वास राष्ट्र-धर्म के पीछे आता है। यह हमारी परंपरा रही। बाणों की शैया पर लेटे भीष्म पितामह ने अपने आखिरी उपदेश में यही तो कहा था कि जब

कभी देश के बंटवारे का सवाल आ जावे तो राष्ट्र-धर्म का पालन करने के लिए कुरुक्षेत्र में आना ही पड़ेगा। मुश्किल यह है कि आज पांडवों व कौरवों की सेना अलग-अलग नहीं, मिल-जुल गई है। कौन लड़ेगा, जब हर आंगन को कुरुक्षेत्र बनाने पर लोग तुले हुए हैं?

केवल राम, रहीम और ईसा की संयुक्त कृपा ही यह संभव कर दिखा सकती है। भगवान राम, मैं भी बजरंग दल का एक अकिंचन सदस्य हूं, लेकिन उस बजरंग दल का नहीं जो त्रिशूल और नंगी तलवारों से माताओं व बहनों को आतंकित करते हैं। मैं आपके अनन्य भक्त बजरंग बली के दल का हूं जिनका एक मात्र आदर्श था- **"राम काज कीन्हें बिना मोहि कहां विश्राम।"** इन्हीं शब्दों का स्मरण करते हुए मैं बेहोशी में जाऊंगा और अगर तुम्हें इस अकिंचन सेवक से और कुछ काम लेना श्रेयस्कर दिखें तो वापस बुला लेना- वरना जीवन में जो कुछ तुम्हारी कृपा से कर सका हूं, मेरे लिए पर्याप्त है।

एस्कार्ट हास्पिटल
इन्टेसिव केयर यूनिट **22.10.90 (6.15 बजे सायं)**

पुनश्चः

भगवन्, आपकी प्रेरणा से संत तुलसीदास ने आपकी महिमा का वर्णन करके सभी प्राणियों के लिये एक प्रेरणास्त्रोत के रूप में राम चरित मानस दिया। इतनी कृपा और कर देते तो इस देश पर आपत्ति के बादल आदि नहीं मडंराते, यदि संत तुलसीदास ने अयोध्या जी में आपके जन्म स्थान पर निर्मित मंदिर का भी वर्णन कर दिया होता। वे तो केवल इतना ही कह कर रुक गये **'भए प्रगट कृपाला, दीन दयाला, कौशल्या हितकारी'** कुछ अनुत्तरित प्रश्न आने वाली पीढ़ियों के विवेक पर हरदम छूट जाते हैं। हम सबको कम से कम इतनी सद्बुद्धि तो जरूर दीजिये कि इनका उत्तर आपके सच्चे भक्तों की भांति खोजने का प्रयास तो करें।

धार्मिकता और सांप्रदायिकता दो अलग-अलग मान्यताएं हैं। धार्मिकता तो मनुष्य को उदार बनाती है, मानवता का विस्तार करती हुई समन्वय का अन्वेषण करती है जबकि सांप्रदायिकता की दृष्टि व्यक्ति को संकीर्ण बनाती है, मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने की बजाय काटती है। धार्मिकता और सांप्रदायिकता एक चीज नहीं है, सच्चा धार्मिक व्यक्ति सांप्रदायिक हो ही नहीं सकता क्योंकि वह ईमानदार जो होता है। धर्म और ईमानदारी के इस रिश्ते को हमें बराबर याद रखना है। राष्ट्रीय जीवन के आज के माहौल में इस सत्य की पहचान कराना बहुत जरूरी हो गया है। हमारे सामाजिक, राजनीतिक आदि सभी व्यवहारों में ईमानदारी ही धार्मिकता का प्राण तत्व है। इसके बिना व्यवहारों में विसंगतियां पैदा होती हैं और समाज बिखर जाता है, लोक जीवन त्रस्त हो जाता है। यह देश केवल हिन्दुओं का नहीं है। हिन्दुस्तान जैसे हिन्दुओं का प्यारा जन्म स्थान है, वैसे ही मुसलमानों का भी है, ये दोनों जातियां अब यहीं बसती हैं, और सदा बसी रहेंगी। इन दोनों में जितना परस्पर मेल और एकता बढ़ेगी उतनी ही देश की उन्नति और शक्ति बढ़ेगी।

–23 जनवरी, 1993

कातिल का खंजर राष्ट्र का प्रतीक न बने

कुछ ऐसी बातें आपके सामने रखना चाहता हूं जिससे आप भलीभांति समझ सकें, अच्छी तरह से समझ सकें कि वे कौन से खतरे हैं, जो आज हमारे सामने हैं। वे खतरे कौन पैदा कर रहे हैं? उनकी पहचान कर सकें और फिर उन खतरों से देश की रक्षा कर सकें। इस बारे में विचार करके आपने कुछ फैसले करने हैं। आपने पिछले 4-5 सालों में देखा होगा कि किस प्रकार के धीरे-धीरे कुछ व्यक्तियों ने , कुछ पार्टियों ने, भारत के गणराज्य को एक ऐसी दिशा में मोड़ने की कोशिश की है, जो दिशा हमारे देश के स्वतंत्रता-संग्राम सेनानियों की दिशा नहीं है, जो हमारे संविधान के रचयिता के मन के मुताबिक दिशा नहीं है और जो संविधान में दिये गये अधिकार, आदर्श और उद्देश्य हैं उनसे भी कोई मेल नहीं खाती। फिर ऐसी दिशा देने की जरूरत क्या पड़ी, यह पहला सवाल है?

जो पीढ़ी देश और समाज की हकीकत को पहचानने में गफलत करती है वो केवल इतिहास के कूड़े-खाने में ही नजर आती है। बीच में उसके लिए कोई स्थान नहीं होता। यह हकीकत है कि पिछले 45 सालों में ऐसी शक्तियों ने, ऐसी पार्टियों ने, काफी हद तक सफलता पाई, हमारे प्रजातंत्र को हमारे संवैधानिक अधिकारों को उस परिधि और सीमा के बाहर ले जाने में जहां ले जाने का उन्हें कोई अधिकार नहीं था।

पार्लियामेंट में भारतीय जनता पार्टी को 2 सीटों से जो 117 सीटें मिली है, वो किसी आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक कार्यक्रम के आधार पर नहीं मिली हैं, क्योंकि ऐसा कार्यक्रम उन्होंने देश के सामने रखा ही नहीं। यह 2 से 117 सीटें केवल धार्मिक जज्बातों को उभार कर मिली और उसी के सहारे पार्लियामेंट में चुनकर आने का मौका मिल गया और हम सब, जो संविधान के हामी हैं, जो प्रजातंत्र का गुणगान करते हैं हम सब मूकदर्शक बने रह गये। कानून और संविधान का उल्लंघन करके 117 लोग लोकसभा में हमारे सामने बैठ गये। अब आगे का एजेन्डा उनका बहुत साफ बन गया है, हिन्दुस्तान की समूची सत्ता को हथियाने के लिए एक कार्यक्रम उन्होंने बनाया है। उस कार्यक्रम को अमल में लाया जा रहा है। बाबरी मस्जिद का टूटना, उस कार्यक्रम का एक बहुत अहम् पड़ाव था, एक मंजिल थी। अगर हम इस बात को नहीं समझ सकते हैं, यदि इसके बारे में अभी भी हमारे दिल में कोई भ्रम है तो फिर आधी लड़ाई तो हम यहीं हार गये, आगे क्या होगा ईश्वर जानता है?

भारत की चुनी हुई संसद बैठती है पार्लियामेंट हाऊस में, लेकिन आज उस संसद के हाथ में यह अधिकार नहीं है कि वह सारे राष्ट्र के बारे में सोच-समझ कर कोई फैसला करे और उस फैसले को देश में मनवाने के लिए लोगों से अनिवार्य रूप से उसका पालन कराये। एक धर्म संसद बन गई है, नाम उसका भी संसद है लेकिन वह संसद हमारे देश के संविधान से गवर्न नहीं होती। हमारे कानूनों से गवर्न नहीं होती। हमारी उन आस्थाओं से प्रभावित नहीं होती जिन आस्थाओं के सहारे इस देश ने हजारों साल का अपना इतिहास बनाया। वो संसद न तो चुनी हुई संसद है न कोई प्रजातांत्रिक मोहर उस पर लगी हुई है। वो ऐसे चुनींदे लोगों की संसद है जिनको भारतीय जनता पार्टी ने सांसद बनाने की घोषणा कर दी।

ऐसे लोग आज इस देश के भविष्य के बारे में फैसलों करते हैं, और भारतीय जनता पार्टी ने बड़ी खूबसूरती से अपने-अपने कार्यक्षेत्र बांट लिये हैं क्योंकि वो राजनैतिक दल बने हैं। दल के रूप में मान्यता प्राप्त करने के लिए उन्होंने एफेडेविट दिया है इलेक्शन कमीशन के सामने। यों तो एफेडेविट का अर्थ उनकी नजरों में नहीं है लेकिन फिर भी कानून को मानने की बात भी चलनी चाहिए और उसके तोड़ने के तरीके भी निकालने चाहिए, यह उनका उद्देश्य है। हल्फनामा तो दिया है इलेक्शन कमीशन में, कि हम डेमोक्रेसी और सैक्यूलरिज्म में विश्वास करते हैं, इसलिए उससे बचने के लिये कुछ और संस्थायें साथ में चाहिये, जिन्होंने हल्फनामा इलेक्शन कमीशन को नहीं दिया है। और वो संस्थायें हैं– विश्व हिन्दू परिषद् और आर.एस.एस., बजरंग दल। इन्होंने तो कोई हल्फनामा दिया नहीं कि वो डेमोक्रेसी और सैक्यूलरिल्म को मानते हैं। तो जो काम यह स्वयं करने में हिचकिचाते हैं संवैधानिक अधिकारों की वजह से, संवैधानिक प्रावधानों की वजह से, वो काम यह करवाते हैं, विश्व हिन्दू परिषद्, बजरंग दल और अन्य संस्थाओं के माध्यम से।

आप को इन चीजों को समझना होगा, तभी आप पहचान सकेंगे कि आपकी लड़ाई किससे है। 18 या 19 नवम्बर को पहला हल्फनामा उत्तर प्रदेश सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में दाखिल किया है, जरा उसे पढ़ने की कोशिश करें। उसी हल्फनामे में उत्तर प्रदेश की सरकार की तरफ से यह कहा गया कि 30 नवम्बर तक हमको समय दिया जाये, तो हम कोशिश करके सबको मिला जुला करके ऐसा कोई रास्ता निकालेंगे। जिससे किसी प्रकार का लड़ाई झगड़ा न हो। तारीख महत्वपूर्ण है। 6 दिसंबर को कारसेवा शुरू करनी है और 30 नवम्बर तक का उनको समय चाहिये। अर्थात 30 नवम्बर के बाद कुछ करने का मौका ही न मिले! यह रास्ता उन्होंने शुरू से ही बना लिया। ऐसा नहीं

कि बीच में उन्होंने इसे बदला हो। जब सुप्रीम कोर्ट इस मामले में अपनी जिम्मेदारी को समझते हुए समय-समय पर उनसे बातें पूछती रही, तो एक के बाद एक न जाने कितने हल्फनामें, सभी को भ्रम में डालने के लिए वो देते रहे और आखिर मामले को ले गये 5 दिसम्बर तक। उधर हजारों लोगों को वहां आने का आमंत्रण मिल गया। सरकार ने इंतजाम किया और राजकीय सरकारों ने पूरा मोबलाइजेशन किया, पैसे दिये और सबको लाकर अयोध्या में इकट्ठा कर दिया। और उसके बाद न उत्तर प्रदेश की सरकार के हाथ में फैसला रहा, न केन्द्र सरकार के हाथ में फैसला रहा। फैसला उन लोगों के हाथ में करने का अधिकार पहुंच गया जो धार्मिक जज्बातों से पूरी तरह से प्रभावित थे और जिन्हें एक ही लक्ष्य दिया गया था कि बाबरी मस्जिद को तोड़ना है।

जिस देश के करोड़ों लोगों के पास केवल आसमान ही छत हो। उनके लिये बहुत जरूरी नहीं है कि, आज ही कहीं पर मस्जिद बन जाये या मंदिर बन जाये, गुरूद्वारा बन जाये जो बने है वे बने रहें, नये बनाना है वह भी बने लेकिन पहले उन लोगों के ऊपर आसमान के अलावा एक छोटी सी छत भी तो चाहिये, उनका ध्यान वहां से कैसे हटाया जाये इसके लिये यह पूरा कार्यक्रम था।

अब संविधान को डेनेग्रेट करने की प्रक्रिया शुरू हो गई है। और फिर यह उनका दुर्भाग्य है कि स्वतंत्रता संग्राम के दौरान इस देश के जो लाखों लोगों भारत माता के कदमों में पड़ी हुई गुलामी की जंजीरों को तोड़ने हेतु कुर्बानी देने के लिए प्रेरित हुये थे, बलिदान दिये थे, उन लोगों को भी किसी भी तरह से डेनीग्रेट किया जाये, उनको बेइज्जत किया जाये। उसका लेटेस्ट प्रमाण हमको भाजपा के संगठनों ने दिया। माता टीला से दिल्ली पहुंचते ही विश्व हिन्दू परिषद् के महासचिव श्री सिंघल जी ने घोषणा कर दी कि 6 दिसम्बर को जो कुछ हुआ है वह देश की आजादी के बराबर ही है

और उसका उसी प्रकार से हमें सेलिब्रेशन करना चाहिये जैसे 15 अगस्त को हम सब लोग सेलिब्रेट करते हैं। सिंघल साहब के नजरिये में हम जैसे दुर्भाग्य से परिपूर्ण और कौन लोग होंगे जिन्होंने अपनी आंखों से 15 अगस्त 1947 देखा है।

क्या जिन लोगों ने इन्कलाब, जिंदाबाद के नारों के साथ गोलियां सही थी– आज उनके जजबे सो गये हैं कि ऐसा प्रस्ताव भी इस देश के सामने रखा जा सके और यह कोशिश की जाये कि हम उन गुण्डों की तुलना जिन्होंने अयोध्या में यह काम किया है, उनकी तुलना हम गांधीजी से तिलक जी से, पंडित जी से, सुभाष चन्द्र बोस से, मौलाना आजाद से, हमारे देश के ऐसे नेताओं से करें जिनकी वजह से 15 अगस्त की सुबह हमारे देश में आई। यह बातें मुझे आपके सामने कहते कोई प्रसन्नता नहीं है, कोई खुशी नहीं है और न कोई मेरी मजबूरी है लेकिन मेरे जजबात है, इसलिए मैं आपसे कह रहा हूं और इस उम्मीद से कह रहा हूं कि भारत की तरुणाई अभी नहीं सोई है, अभी पूरी तरह से हतोत्साहित नहीं हुई है।

एक आधुनिक राष्ट्र की हैसियत से हमारा इतिहास केवल 45-46 वर्ष का है लेकिन एक देश की हैसियत से एक कौम की हैसियत से हमारा इतिहास हजारों सालों का है और उन हजारों साल के इतिहास की जो हमारी कमाई है यह जो विरासत है आज वो हमें पुकार रही है, वो हमें ललकार रही है। उसकी रक्षा करने के लिए आज देश के नौजवान के हाथ उठेंगे कि नहीं उठेंगे? या हम अपने छोटे-मोटे झगड़ों में फंसकर किसी प्रकार से मजबूरियों का शिकार होकर भ्रमित होकर अपने दरवाजे बन्द करके घर के अन्दर बैठे रहेंगे, उस दिन का इंतजार करते हुए जब सारा कुछ लुट गया होगा और भारत इतिहास के उस चौराहे पर ले जाकर खड़ा कर दिया गया होगा जब किसी भी तरफ मुड़ने का अर्थ एक ही होगा– न हम भविष्य की ओर बढ़ सकेंगे, न हम भूतकाल की ओर बढ़ सकेंगे, तब खड़े-खड़े वहीं पर अपने अस्तित्व को समाप्त करने के अलावा कोई दूसरा हमारे पास विकल्प नहीं रहेगा।

मुझे आपके जो चेहरे नजर आ रहे हैं जिनमें मैं बेचैनी देखता हूं, जिनमें थोड़ी सी चिंता देखता हूं और मुझे आपकी आंखों में नजर आ रहा है। देश के लिये कुछ कर गुजरने का उत्साह, सब बंधनों को तोड़ दीजिये, जैसे स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है **'शेर की तरह जब नौजवान उठेगा तभी देश बनेगा, उसकी रक्षा होगी।' हम इस बात से कतई सहमत नहीं हैं कि कातिल का खंजर हमारे राष्ट्र का प्रतीक बने** हमारे राष्ट्र का प्रतीक है अशोक चक्र, धर्म चक्र। हमारे राष्ट्र का प्रतीक है हमारी सद्भावना, सहिष्णुता, सब धर्मों को समान समझने की हमारी परिकल्पना। ये हमारे प्रतीक हैं। और प्रतीक हैं कौम के, जो राष्ट्र के भविष्य को, वर्तमान को प्रभावित करते हैं, बनाते हैं और बिगाड़ भी सकते हैं। आज वे चाहते हैं कि कातिल का खंजर हमारे देश का प्रतीक बन जाये। वे हाथ चाहे हिन्दू के हों या मुसलमान के हों सिख के हों या ईसाई के हों, कातिल के हाथ हैं? यह पहचानने की आज सख्त जरूरत है और इसे पहचानने में यदि हमने गफलत की है तो फिर हमारी तरुणाई भी बेकार है। हमारे जजबे भी बेकार हैं। मैं अपनी बात शिव मंगल सिंह 'सुमन' के उन शब्दों से समाप्त करना चाहता हूं, जो उन्होंने देश के आजाद होने के पहले कहे थे और जो आज भी गूंज रहे है **'जरा मशाल जलाओ- बड़ा अंधेरा है।'**

-14 जनवरी, 1993

"गुरुर्देवो भव"

मैं शिष्यों से गुरूजनों के लिये पौराणिक दक्षिणा की मांग तो नहीं करता किन्तु एक आह्वान करता हूं कि दक्षिणा के रूप में आप सब लोग अपने गुरूजनों को इस बात का आश्वासन दें कि वे उनसे अर्जित शिक्षा के ज्ञान-विज्ञान एवं कला-कौशल रूपी संसाधन से देश के सर्वांगीण विकास, एकता, अखंडता, सहिष्णुता, शांति तथा सद्भाव को प्राण-प्रण से कायम रखने में प्रतिक्षण तैयार रहेंगे और **वसुधैव कुटुम्बकम्** की भावना से ओतप्रोत होकर देश काल, राष्ट्र एवं जनहित में कल्याणकारी कदम उठायेंगे।

विगत वर्षों में यह महसूस किया गया है कि हमारी शिक्षा व्यवस्था की प्रकृति ने राष्ट्रीय मूल्यों को नहीं परखा एवं आवश्यकताओं की पूर्ति में कोई विशेष सहयोग नहीं प्रदान किया है। शिक्षा के वर्तमान प्रतिमानों ने बेरोजगारी की कुंठा को जन्म दिया है। शिक्षा ने हमें अपने नैतिक एवं सामाजिक दायित्वों तथा आदर्शों से जोड़ने में कुछ हद तक निराश भी किया है। **सा विद्या वा विमुक्तये** की उक्ति चरितार्थ नहीं हो पा रही है क्योंकि शिक्षा के ज्ञान संदर्भ में दायित्व बोध का न तो जनजीवन का द्वार ही खुल सका और न ही नवयुवकों की हीन भवाना को समाप्त करने का सुख ही मिल पाया है। शिक्षा की इन्हीं विसंगितयों ने हमारे युवावर्ग को आक्रोश से भर दिया है। हमें अपनी परंपराओं और संस्कारों से अलग-थलग कर दिया है। इन सबका कारण सही मायने में हम सबका शिक्षा के नैतिक मूल्यों को न समझ पाना है। विचारों एवं संस्कारों को अदूरदर्शिता का

कलुषित कलेवर हमें निगल रहा है। हम शिक्षा से बहुत कुछ पाने को तो आतुर दिखाई देते हैं किन्तु शिक्षा के नैतिक मूल्यों की रक्षा तथा आदर्शों के रख रखाव की बात नहीं सोच पाते।

'गुरर्देवो भव' का मंत्र जपने वाले इस देश में आज गुरूजनों की प्रतिष्ठा पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है। यह एक स्पष्ट एवं अकाट्य कथन है कि गुरू बिना ज्ञान नहीं। आज इस मर्म को गहराई से समझना होगा। इन विद्या मंदिरों की पवित्रता की लाज रखनी होगी। मैं आचार्यों से इस बात की उम्मीद करूंगा कि उनसे अपने देश की गरिमा के अनुरूप एकता, समता, शालीनता और शुभ दिव्यता का संदेश छात्रों को मिल सकेगा। हम सब इस धरती मां की प्यारी संतान है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारत एक है। हमारा देश महान है, इस की महान गोद में जन्म लेकर स्वप्नों की सुनहरी किरणों की आस हम लिये हैं।

आज का विद्यार्थी मानव रूप में एक ऐसा संसाधन है जो नवसृजन की दहलीज पर है। इसे अभी बहुत कुछ बनना है, सीखना है, इसे जीवन के उत्कृष्ट मूल्यों को समझना है। उत्तरादायित्ववों का निर्वाह करना है। मुझे बेहद खुशी होगी जब ज्ञान की ज्वाला में जलते हुये ये विचार अज्ञान की परिधि में प्रकाश भर देंगे। नवसृजन एवं नई कल्पना क्रांति के अग्रदूत बनेंगे।

-25 जनवरी, 1992

हमारी दुनिया में सब कुछ परिवर्तनशील ही नहीं कुछ शाश्वत भी है। प्रकृति शाश्वत है। मनुष्य की प्रकृति भी शाश्वत है। उनमें आदतें हैं और उन आदतों के हेतु- क्रोध, मान, माया, लोभ आदि तत्व हैं। अच्छाई और बुराई चिरकालीन है। केवल इनका रूप बदलता रहता है। पदार्थ बदलते हैं, दुनिया बदलती है। फिर मनुष्य क्यों नहीं बदलता। मनुष्य अपनी प्रकृति का निरीक्षण करे, उसे समझे और उसमें परिवर्तन लाने के लिए अभ्यास करे।

मैं समझता हूं। कि मनुष्य मानसिक और भावनात्मक विकास से ही हिंसा, असहिष्णुता और कटुता पर विजय प्राप्त कर सकता है। परंतु पूर्ण अहिंसा का मार्ग सभी के लिए सरल नहीं है। भगवान महावीर ने एक नया रास्ता सुझाया। उन्होंने कहा - "पूर्ण हिंसा न छोड़ सको तो कम से कम किसी मनुष्य, पशु आदि को संकल्पपूर्वक मत मारो।" आज हिंसा व्यक्ति से भी आगे सामाजिक क्षेत्र में भी उजागर हो रही है। इसलिए कभी भी किसी भी कारणवश हिंसा फूट पड़ती है। जहां धर्म का उदय हिंसा मिटाने के लिए हुआ था किन्तु आज धर्म के नाम पर हिंसा को प्रोत्साहन दिया जाने लगा है। आज कुछ

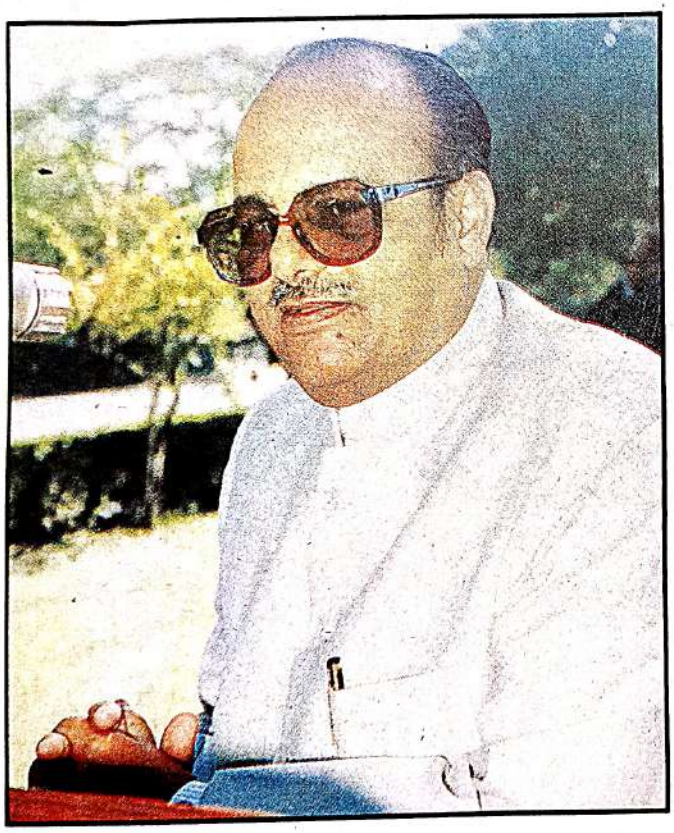

निहित स्वार्थी लोग धर्म को अपनी बपौती मानकर समाज में घृणा और हिंसा की दीवारें खड़ी करने के प्रयास कर रहे हैं लेकिन भारतीय जनमानस साम्प्रदायिकता को सद्भावना और सहिष्णुता की वास्तविकता पर हावी नहीं होने देगा।

समाज मे धार्मिक कट्टरता को बढ़ावा मिलने का सबसे बड़ा कारण है- धर्म और नैतिकता के बीच सामंजस्य की कमी। हमें धर्म और नैतिकता के बीच सामंजस्य स्थापित करना है। धर्म गौण हो गया, सम्प्रदाय मुख्य हो गए। अपेक्षा यह है कि धर्म मुख्य रहे और सम्प्रदाय गौण हो। कोई भी व्यक्ति नैतिक हुए बिना धार्मिक नहीं बन सकता। उपासना केवल आराधना का माध्यम है। उपासना को धर्म पर प्राथमिकता दिया जाना घातक होगा। यही कारण है कि आज उपासना के केन्द्र संघर्ष के केन्द्र बन गए हैं। प्रथम स्थान मानव धर्म का है। और यदि इस पर अमल किया जाये तो धर्म स्थानों और उपासना केन्द्रों के बारे में उठाये जाने वाले विवाद नहीं रहेंगे।

किसी भी प्रवृत्ति, कार्यक्रम, संस्था, समाज अथवा राष्ट्र को संचालन करने वाला व्यक्ति ही होता है। उस व्यक्ति का चरित्र-निर्माण न हो तो अच्छी से अच्छी व्यवस्था भी लड़खड़ा जाती है। व्यक्ति के चरित्र-निर्माण का प्रयत्न बुनियादी सच्चाई है।

-31 अक्टूबर , 1992

मानसिक परिवर्तन की गलत दिशा महाविनाशकारक होगी

हमें सांप्रदायिक ताकतों के षड्यंत्रों से सचेत रहना है। यदि हमने मानसिक परिवर्तन की कोशिश को समझने में भूल की और इस साजिश को बेनकाब न किया तो भारत को महाविनाश से कोई भी ताकत नहीं बचा सकती। मैं साम्प्रदायिक ताकतों द्वारा किये जा रहे मानसिक परिवर्तन के प्रति लोगों को सचेत करना चाहता हूं। कांग्रेस पार्टी गंगा की तरह है। आजादी के पहले उबड़-खाबड़ रास्तों से बही अब आजादी के बाद उसका प्रवाह शांत एवं गंभीर है। उसके किनारों पर गंगा तीर की सभ्यहताओं की भांति ही कई विचार पनपे पर कांग्रेस की धारा धीर गंभीर शांत- स्वच्छ ही रही आयी। लेकिन जब किसी शांत एवं गहरे प्रवाह को अवरुद्ध करने की कोशिश की जायेगी तो उसमें उथल पुथल आयेगी ही। यदि गंगा का स्वरूप बदलने की कोशिश की गई तो उसकी सीमाओं तथा मर्यादाओं के बरकरार रहने की कल्पना कैसें की जा सकती है? ठीक यही हालत आज कांग्रेस की है।

हालांकि हमें अतीत का गुलाम नहीं होना चाहिए। किन्तु इसका मतलब यह कतई नहीं कि हम इतिहास से अनभिज्ञ रहे आयें। क्योंकि क्रूर इतिहास अपने आपको दुहराता ही है और हम उससे अनभिज्ञ हुये तो वह हमारा दमन कर देगा।

आजादी मिलने के ६ माह बाद ही षड्यंत्र शुरू हो गये थे। नाथूराम गोडसे ने महात्मा गांधी के सीने को गोलियों से छलनी कर दिया था। आखिर गांधी जी की हत्या क्यों हुई? इसलिये कि जिस विचारधारा से हत्यारा प्रेरित था उसके पोषक जानते थे कि जब तक यह देश गांधी से प्रेरित है तब तक देश में सांप्रदायिक ताकतों का वर्चस्व स्थापित न हो पायेगा। सो उन्हें गोली से उड़ा दिया। महात्मा गांधी की हत्या के बाद देश में उत्पन्न वातावरण की वजह से संकीर्णता वादी ताकतों के इरादे बीस साल के लिये जमींदोज़ हो गये। साथ ही उस समय पं. जवाहरलाल नेहरू जैसा विराट नेतृत्व था जिसकी प्रखरता में ऐसी ताकतों के पनपने का कोई सवाल ही नहीं था। धर्मान्धता कट्टरवादिता इस विचारधारा की प्रमुख अंग है। उन्होंने इंदिरा गांधी की हत्या की और जब उन्हें लगा भारत की तरुणाई राजीव गांधी के साथ जुड़ रही है तो उन्होंने उन पर चरित्र हनन का आरोप लगाया और बाद में उनका भी कत्ल कर दिया। रूप और नाम भले ही बदले हुये हों मगर उनके इरादे एवं कार्यप्रणाली एक ही है। हमारे सामने हमारे कर्तव्य प्रमुख है। मैं साधारण सा आदमी हूं और मैंने कांग्रेस के सहारे पहचान बनाई है। यदि हम पहचान बनाने वाली संस्था को ही समाप्त कर देंगे तो हम कहां रहेंगे। हम पार्टी से वफादारी करेंगे या गद्दारी यह हमें सोचना होगा।

-26 अगस्त, 1992

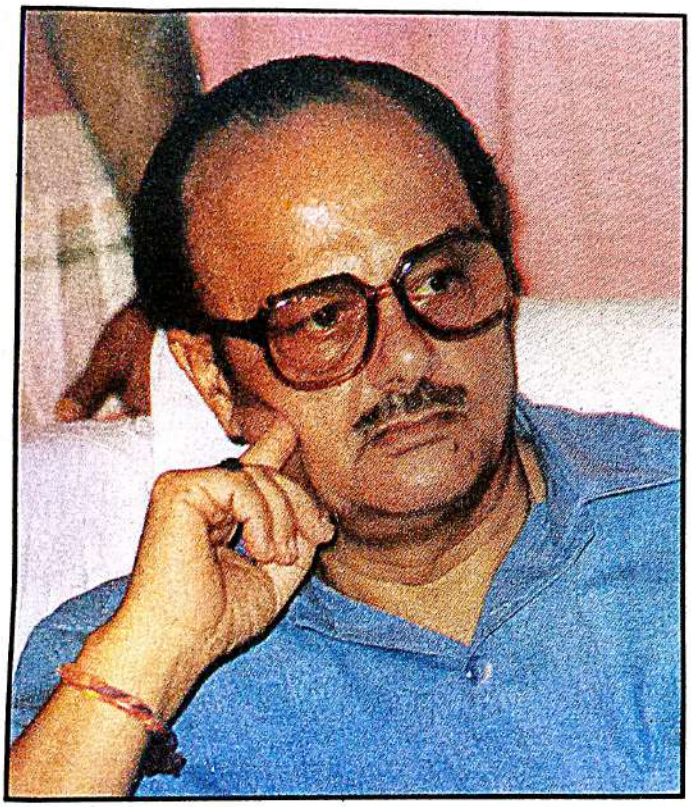

प्रधानमंत्री के राजनैतिक सलाहकार को पत्र

आपने देखा होगा कि 9 जुलाई 1992 के बाद से, जब भाजपा गठबंधन ने अचानक अयोध्या में बाबरी मस्जिद के चारों ओर समूचे देश में उत्तेजना बढ़ाते हुए निर्माण कार्य शुरू कर दिया, तो कांग्रेसजन यह तय नहीं कर पाये कि इस परिस्थिति में उनकी क्या प्रतिक्रिया हो। यह कांग्रेसजनों के विवेक पर छोड़ दिया गया कि वे स्वेच्छा से टिप्पणी और कार्य करें। इसका यह परिणाम हुआ कि यह धारणा बनी कि कांग्रेस पार्टी की कोई निश्चित और सुसंगत प्रतिक्रिया ही नहीं है। आप मुझसे सहमत होंगे कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी में कांग्रेस अध्यक्ष ने जो चिंता प्रगट की वह अत्यन्त सामयिक थी। तब से घटनाक्रम बहुत तेजी से चला है और देश में गंभीर साम्प्रदायिक संकेतों से भरा एक संकट तीव्रतर होते देखा है जो एक ऐसे दल की कारस्तानी है जिसे हमारी राज-व्यवस्था के प्रजातांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष ढांचे की कोई परवाह नहीं है।

जहां हमें एक ओर वह सब कुछ करना है जिससे प्रधानमंत्री जी की यह पहल मजबूत हो, वहीं दूसरी ओर, हम कांग्रेस पार्टी के सदस्यों के रूप में अपना कर्तव्य पूरा करने में असफल होंगे, यदि यह समझने और प्रकट करने में विलंब करेंगे कि भारतीय जनता पार्टी किस प्रकार असत्य और घातक आधारों का सहारा लेकर, एकाग्रभाव एवं बेरहमी से राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए प्रयास कर रही है, भले ही देश के लिए इस

असंगत प्रयास के कोई भी परिणाम क्यों न निकलें।

1991 के मध्य में आम चुनावों के दौरान श्री राजीव गांधी की हत्या के बाद के घटनाक्रम पर एक नजर डालना प्रासंगिक होगा। आतंकवादी, संकीर्णतावादी और साम्प्रदायिक शक्तियों द्वारा हमारे देश को अस्थिर करने की यह सबसे ताजा कोशिश थी। शायद उन्होंने सोचा था कि यह भयानक घटना कांग्रेस पार्टी को भौंचक्का कर देगी और उसके परिणामस्वरूप जो भ्रम का वातावरण बनेगा उसमें वे अपना हित साध सकेंगे। वस्तुतः जैसा कि इस देश का इतिहास ही रहा है,ऐसी हर घटना ने, कांग्रेस को किंकर्तव्यविमूढ़ करने के बजाये उसे देश को उत्प्रेरित करने का अवसर दिया है कि वह अपने इच्छित आदर्शों और सिद्धांतों की रक्षा कर सके। इस दुखद घटना के बाद विपक्ष के नेता के रूप में श्री लालकृष्ण आडवाणी ने अपनी भावना को किस तरह व्यक्त किया था यह हमें एक पल के लिये भी भूलना नहीं चाहिये। उन्होंने कहा था कि अब कांग्रेस विरोध विपक्ष की क्रिया-प्रतिक्रिया को शासित नहीं करेगा क्योंकि राष्ट्र के विकास के लिये कांग्रेस पार्टी ने जो नेहरू माडेल अपनाया था उसे स्वयं कांग्रेस ने त्याग दिया। सिर्फ भोले लोग ही इस वक्तव्य के अनर्थकारी तर्क को अनदेखा कर सकते हैं।

इसके बाद हमने देखा कि कैसे भाजपा ने एक महीन सा अभियान खुद ही शुरू किया कि कांग्रेस अब उनसे सहयोग लेने में संकोची नहीं है और दरअसल उन्होंने यह प्रसारित करने की कोशिश की कि वे ही हमारे सबसे अच्छे मित्र हैं। यह और बात है कि यह राजनैतिक वितण्डावाद पूरी तरह से चल नहीं पाया हालांकि वे पार्टी के अंदर कुछ भ्रम फैलाने और देश के लोगों में कुछ संदेह उपजाने में कामयाब हुए, फिर भी, उन्होंने एक भी ऐसा मौका नहीं चूका जबकि जहां वे चाहते हों, चोट पहुंचाने के लिए उन्होंने वार न किया हो। वे अगर सफल नहीं हुए तो श्री नरसिंहराव जी की सतर्कता और संसद के कांग्रेस सदस्यों और अन्य कांग्रेसजन के दृढ़ निश्चय के कारण। चूंकि यह हाल का ही इतिहास है, मुझे ब्यौरे में जाने की जरूरत नहीं है।

भारतीय जनता पार्टी उस साम्प्रदायिक राजनीतिक कार्यक्रम का नवीनतम अवतार है जिसका सूत्रपात 1925 में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की अगुवाई में किया गया था। इस आंदोलन द्वारा फैलाये जहर ने भारत के इतिहास में सबसे मूल्यवान, हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की जान ले ली। पहले आम चुनावों से ही ऐसे साम्प्रदायिक तत्वों द्वारा समर्थित राजनीतिक तत्वों ने सत्ता हथियाने की कोशिश की है और वह सिर्फ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ही है जिसने भारतीय जनसंघ जैसी साम्प्रदायिक पार्टियों का डटकर मुकाबला किया है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सांप्रदायिकता के हर रूप से लड़ने को वचनबद्ध है चाहे वह दानव कहीं भी सर उठाये। 1952 में ही, आम चुनावों के बाद, जनता को धन्यवाद देते हुए अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के कलकत्ता अधिवेशन में 22-23 मई को यह बात कही गई थी, "यह नहीं समझना चाहिए कि साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों का खतरा समाप्त हो चुका है। साम्प्रदायिक, अलगाववादी प्रवृत्तियां अभी वहीं हैं, अनेक रूपों में और हमें इनसे लड़ने के लिए सतर्क रहना पड़ेगा, चाहे ये कहीं से प्रकट हों, हिन्दू-मुस्लिम , सिख या किसी अन्य सम्प्रदाय से, इसी बात पर भी जोर दिया था, तिरुपति की ये घोषणायें और अपने अध्यक्षीय भाषण में कांग्रेस अध्यक्ष श्री नरसिंहराव जी द्वारा उनका भावपूर्ण विस्तार किसी भी कांग्रेसजन को और, मैं कहना चाहूंगा कि किसी भी भारतीय को, किसी सन्देह में नहीं रखते कि हमारे गणतंत्र के सामने सच्चे खतरे क्या हैं। प्रस्ताव और अध्यक्ष का भाषण कांग्रेस के इस संकल्प को भी प्रगट करते हैं कि यह पार्टी उन धर्मनिरपेक्ष और प्रजातांत्रिक लक्ष्यों की रक्षा के लिए, जिसके संवैधानिक आधार पर हमारा गणतंत्र स्थापित है, चल रहे संघर्ष में शामिल

होने और गिने जाने के लिए तैयार है। दरअसल तिरुपति अधिवेशन ने इस देश के मामलों को, कांग्रेस क्या राजनैतिक दिशा देना चाहती है, इस बारे में फैलाये जा रहे भ्रम के अभियान को रोका है। इस अधिवेशन में भाजपा को आज के राजनैतिक परिदृश्य में राजनैतिक महत्व को भी हाशिये में ला खड़ा किया है जिसका नतीजा यह है कि सभी प्रमुख मुद्दों पर वह अलग-थलग पड़ गयी है। मेरा यह दृढ़ मत है कि इस दुर्गति के कारण ही भाजपा ने अयोध्या में तनाव की लपटों को बढ़ाया ताकि वे भारतीय राजनैतिक दृश्य के केन्द्र में फिर आ सकें। अयोध्या में जो हुआ, उसके निहितार्थ और उसने जो प्रभाव पैदा किया वे सभी इस तर्क को सत्यापित करते हैं।

दिल्ली में हुई एक बैठक में जिसमें सभी राजनैतिक दलों के नेता शामिल थे और जो लोकसभा में बढ़ती हुई उत्तेजना को कम करने के लिए प्रयासरत थे, विपक्ष के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी, ने स्पष्ट रूप से कहा कि हम उनसे अयोध्या का मसला छोड़ने की कैसे उम्मीद कर सकते हैं जबकि यह प्रदर्शित हो चुका है कि उसी के कारण उनकी लोकसभा में 1985 की 2 सीटें बढ़कर 1992 में 119 हो गयीं। इससे अधिक बेबाक आत्मस्वीकृति कोई और हो नहीं सकती की भारत में बैलेट बाक्स के माध्यम से राजनैतिक सत्ता हथियाने के लिए भाजपा धार्मिक भावनाएं भड़काना चाहती है जबकि चुनाव संबंधी कानूनों में इसकी सख्त मनाही है। इसका सीधा मतलब यही है कि जो वे चाहते हैं उसे पाने में गैर संवैधानिक उपायों को अपनाने में उन्हें रत्ती भर हिचक नहीं है।

भाजपा एक दूसरे मोर्चे पर भी सक्रिय है। वह प्रयासरत है कि जिस तरीके का भी इस्तेमाल करना पड़े कांग्रेस पार्टी और राष्ट्र के महान नेताओं, पं. जवाहरलाल नेहरू, श्रीमती इंदिरा गांधी और राजीव गांधी की छवि को नष्ट किया जाये। इरादा इसके पीछे

उस गौरवपूर्ण अध्याय को धूमिल करना है जो भारत के इतिहास में इन महान नेताओं के प्रेरणास्पद नेतृत्व से जुड़ा है। दरअसल वे हमारे उत्तराधिकार को ही नष्ट करना चाहते हैं। कोई भी स्वाभिमानी कांग्रेसी ऐसा होने की इजाजत नहीं दे सकता। पर सिर्फ चाहने भर से उद्देश्य पूरा नहीं होता है। इस पर सोच-विचार की जरूरत है और सुस्पष्ट मानसिकता से निष्ठापूर्वक प्रयास की जरूरत है तभी हम इस निकृष्ट इरादे को सफल होने से रोक सकते हैं।

जिन राज्यों में विपक्षी दलों की सरकारें हैं वहां क्या परिस्थितियां हैं इसकी विस्तार से समीक्षा करने की जरूरत है। तभी हमें पता चल सकता है कि किस तरह की कठिनाइयों और अड़चनों के बीच कांग्रेसजन वहां काम कर रहे हैं। एक राजनैतिक दल के रूप में जहां हम सभी संवैधानिक मर्यादाओं का पालन करेंगे, वहीं हम अपनी पार्टी के लोगों की तकलीफों से मुंह नहीं फेर सकते और न मूक व निष्क्रिय दर्शक भी नहीं बने रह सकते विशेषत: तब जबकि पार्टी के लोग उन लक्ष्यों और आदर्शों के लिए संघर्ष कर रहे हैं जो कांग्रेस पार्टी के हैं जिनका सम्बन्ध समाज के कमजोर वर्गों के हितों के संरक्षण से है। इस सम्पूर्ण पृष्ठभूमि में कांग्रेस पार्टी को विशेषत: उत्तर भारत में जहां भाजपा का राजनैतिक आधार है उन सभी मुद्दों को पहचानने, विश्लेषित करने और उनका राजनैतिक रूप से प्रतिकार करने के लिए प्रभावशाली उपाय खोजने पड़ेंगे। इस दायित्व से मुकरना इस महान संस्था के साथ घोर अन्याय होगा जिसका इतिहास इस देश के एक शताब्दी से ज्यादा के इतिहास से गुथा हुआ है।

हमारी स्वतंत्रता, हमारा गणतंत्र और हमारी प्रजातान्त्रिक राज्य व्यवस्था उन असंख्य स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के कारण है जिन्होंने सभी भारतीयों के एक बेहतर भविष्य के वास्ते अपना वर्तमान होम दिया था। उन महान नेताओं में जिन्होंने हमारे महान संघर्ष को नेतृत्व दिया था, गांधी जी, पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, डा. राजेन्द्र प्रसाद, मौलाना अबुल कलाम आजाद, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, लाल बहादुर शास्त्री और इन्दिरा गांधी शामिल है। उनमें से तीन, गांधी जी, श्रीमती इन्दिरा गांधी और राजीव गांधी ने इस संघर्ष के माध्यम से हमने जो उपलब्ध किया था उसे बचाये रखने के लिए अन्तिम बलिदान भी दिया है। व्यक्ति, समाज, दल और राष्ट्र के जीवन में एक ऐसा क्षण आता है जब नियति द्वारा निर्धारित कर्तव्य की पुकार तेज और स्पष्ट सुनायी देती है। स्वतंत्रता संग्राम में शामिल होने वालों को जिस आस्था और प्रतिबद्धता ने प्रेरित किया था वह किसी तात्कालिक लाभ से नहीं जुड़ी थी बल्कि वह संघर्ष और बलिदान की भट्टी में ढ़ली थी। कर्तव्य की वही पुकार भारतीयों को और विशेषज्ञ कांग्रेसजन की इस पीढ़ी को फिर बुला रही है कि वे अपने मतभेद समाप्त कर हमारे इस नवजात गणतंत्र के सामने जो सांप्रदायिक, अंधविश्वासी और विघटनकारी शक्तियां खड़ी हैं उनसे निरन्तर संघर्ष करे। इतिहास की इस पुकार को हम अनसुना नहीं कर सकते। इसका हम कैसे उत्तर देते हैं यह सिर्फ वर्तमान की घटनाओं का ही रूप नहीं बल्कि आज के बाद लम्बे समय की घटनाओं को भी प्रभावित करेगा। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं होता कि पुकार का निश्चित और स्पष्ट कर्म द्वारा उत्तर देने में हम सब समर्थ हैं। निर्णय चुनने और कार्रवाई की रूपरेखा बनाने की जिम्मेदारी हमारी है। पुरी विनम्रता से हमें काम शुरू करना चाहिये।

: 2 अगस्त, 1993

भारत की संतानों !! तुम्हें लोकतंत्र बचाना है

14 अगस्त, 1947 की मध्य रात्रि को संविधान सभा में दर्शक के रूप में उपस्थित होने का मुझे अद्वितीय गौरवपूर्ण अवसर मिला जब पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने भावुक स्वर में भारत माता की नियति को दिशा प्रदान की। यह एक ऐसा क्षण था जो, किसी व्यक्ति की बात छोड़िए, किसी देश के जीवन काल में भी विरला ही होता है। इस घटना से पूर्व और बाद का घटनाक्रम विभीषिका जैसा था। छः दशकों के ऐतिहासिक तथा अद्वितीय स्वतंत्रता संघर्ष के बाद दुर्भाग्यपूर्ण बंटवारे ने शताब्दियों से एक रहे राष्ट्र के मजबूत ढांचे को छिन्न-भिन्न कर दिया। दो राष्ट्रों के विनाशकारी सिद्धान्त ने भाई को भाई से अलग कर दिया और जिन्होंने इसका विरोध करने का साहस किया उन्हें निर्दयता से तलवार से कलम कर दिया गया। लगता था कि जैसे पूरा राष्ट्र ही हिंसा और घृणा की ज्वाला में धधकने लगा हो।

अब 40 वर्ष से भी अधिक समय गुजर गया है। देश ने अनेक क्षेत्रों में शानदार प्रगति की है। एक राष्ट्र के रूप में हम विजयोल्लास और आपदाओं का सामना करने में सक्षम हैं। हमने जो लोकतांत्रिक प्रणाली अपनाई, वह कई प्रकार के तनावों और दबावों के बावजूद, चाहे उनका कारण कोई खामियां अथवा अभिकल्पना रही हों, काफी हद तक अपने आप को बनाए रखने में सक्षम रही है। भारत की परिश्रमी जनता को पूरी

सुविधाएं नहीं मिली हैं लेकिन बेहतर प्रबंध व्यवस्था के लिए उनकी संघर्ष क्षमता में बहुआयामी वृद्धि हुई है और वह दिन दूर नहीं जब यह देश पूरी तरह आत्मनिर्भर हो जाएगा, अपनी नियति का स्वयं मालिक होगा, शांति की ओर स्वयं अग्रसर रहने के साथ-साथ विश्व को भी इसके लिए प्रेरित करेगा।

हम सबको यह समझ लेना चाहिए कि यह सब इतनी आसानी से और अपने आप नहीं हो जाएंगा। हमारे लोकतंत्र को अभी भी कुछ ऐसी ताकतों से खतरा है जो उन लोगों द्वारा प्रेरित हैं जो कि देश की अलग-अलग रूपरेखाएं मानकर रात दिन एक करके हमारे देश की वास्तविक एकता की कीमत पर राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अग्रता हासिल करना चाहती हैं। हमें ऐसे खतरों के स्वरूप की बहुत ही बारीकी से जांच करनी चाहिए और सभी अवसरों पर उनसे निपटने के लिए, चाहे जो भी त्याग करना पड़े, एक नीति तैयार करनी चाहिए।

पहला खतरा तो हमारे देश की लोकतांत्रिक प्रणाली को है। यदि लोकतंत्र के प्रसार को संकीर्ण, सांप्रदायिक और धार्मिक विवादों से दूषित करने की अनुमति दी जाती है, जैसा कि चुनावी समर्थन प्राप्त करने के लिए देश के कानूनों के अनुसार किसी भी राजनीतिक दल को नहीं करना चाहिए, तो हमारे देश के लोकतंत्र की विश्वसनीयता को बहुत नुकसान पहुंचेगा।

हम देख रहे हैं कि कुछ दल ऐसे मुद्दों का प्रयोग कानून के विरुद्ध जाकर, वोटों को हथियाने के लिए कर रहे हैं। यहां तक कि वे निर्लज्जता पूर्वक इस आशय की उद्घोषणा भी कर रहे हैं कि उन्होंने मस्जिद को गिराने और मंदिर को बनवाने के लिए लोकतांत्रिक जनादेश प्राप्त कर लिया है। इस संबंध में पहला प्रश्न तो यह है कि क्या इस देश के निर्वाचक कानूनों के अंतर्गत इस आशय का कोई जनादेश प्राप्त किया जा सकता है और दूसरा, क्या भारत की जनता ने किसी दल को ऐसा कोई जनादेश प्रदान किया है? इन दोनों प्रश्नों का जवाब "न" में ही होगा। न तो कानून ही ऐसे जनादेश को प्राप्त करने की इजाजत देता है और न ही जनता ने ऐसा कोई जनादेश प्रदान किया है। वर्ष 1989 और 1991 के संसदीय चुनावों के परिणामों से यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि भारत के मतदाताओं ने इस प्रकार के प्रस्ताव को निर्णायक तौर पर ठुकरा दिया है। इस सब के बावजूद हम देख रहे हैं कि इन मुद्दों पर भावनाओं को भड़काने के प्रयास किए जा रहे हैं, जिसका सीधा अर्थ है- लोगों द्वारा प्रदत्त जनादेश को चुनौती दिया जाना। क्या ऐसे लोगों द्वारा इस देश में लोकतंत्र की सच्चे अर्थों में सेवा की जा सकती है जो लोकतांत्रिक जनादेश के प्रति इतना कम सम्मान रखते हैं? समय की मांग यह है कि उन सभी को, जो लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांतों के प्रति वास्तविक रूप से प्रतिबद्ध हैं, बेहिचक ऐसे व्यक्तियों का भंडाफोड़ करना चाहिए जो, लोकतंत्र के प्रति दिखावटी सहानुभूति दिखाते हुए, जनता को निष्ठाहीन बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

यदि देश की एकता को बनाए रखने की इच्छा को फलीभूत करना है तो हमें देश के विभिन्न भागों के लोगों को यह विश्वास दिलाना होगा कि हमारे संविधान और नियमों में, सभी क्षेत्रीय आकांक्षाओं को, भले ही उनका स्वरूप और प्रबलता कुछ भी हो, को अपने भीतर संजोने की पर्याप्त गुंजाइश है। हमें यह साफ-साफ समझ लेना होगा कि राज्य शक्तियों को बल के एक उपकरण के रूप में प्रयोग में लाए जाने की सीमाएं हैं। देश के किसी भाग के लिए अपेक्षित राजनीतिक व्यवस्था के संबंध में एकमत होने के लिए सभी संभावनाओं का पता लगाया जाना चाहिए। इसकी एकमात्र सीमा यह होनी चाहिए कि देश की प्रभुसत्ता अथवा धर्मनिरपेक्ष स्वरूप को क्षति पहुंचाने वाला कोई काम नहीं किया जाएगा।

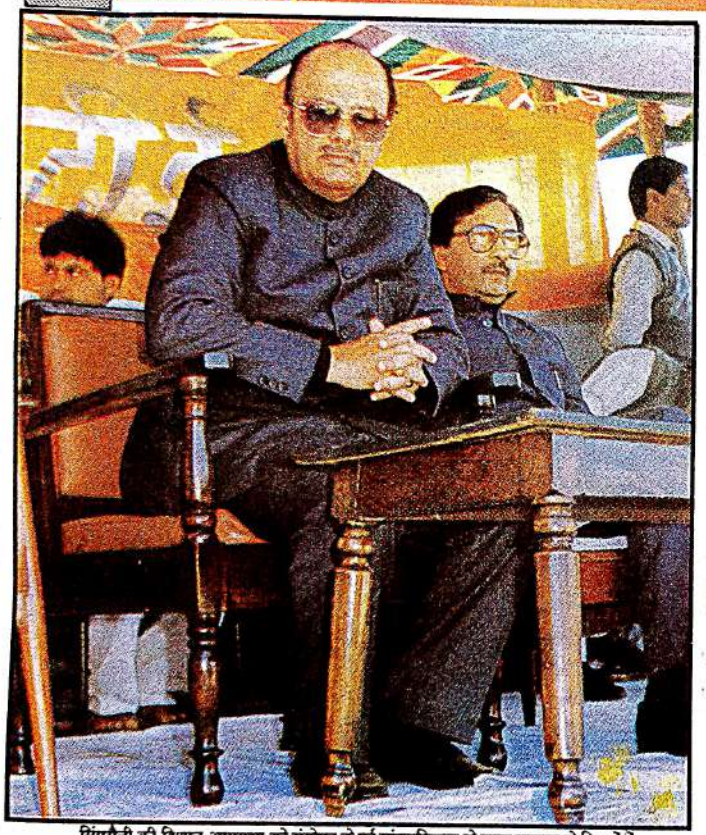

सिंगरौली की विशाल आमसभा को संबोधन के पूर्व साम्प्रदायिकता के समूल उन्मूलन के विचारों में डूबे श्री अर्जुन सिंह व साथ में उस क्षेत्र के सजग प्रहरी श्री भुवनेश्वर प्रताप सिंह राजा बाबा।

आज आवश्यकता इस बात की है कि लोगों के दिमाग और दिलों का मिलन हो। फूट पैदा करने वाले तत्वों से बचे रहने का दृढ़ संकल्प लिया जाए तथा अपनी समस्याओं को सभ्य एवं लोकतांत्रिक ढंग से हल करने के हर संभव प्रयास किए जाएं। यदि देश की एकता बनाए रखने की सच्ची भावना है तो लम्बे चौड़े भाषण की जरूरत नहीं है, न ही किसी को विनम्र बनाने के लिए कटु निंदा या धमकाने की जरूरत है। हमारी विरासत हजारों वर्षों के हमारे इतिहास, धार्मिक उदारता और सांस्कृतिक विविधता का समन्वित स्वरूप है जो भविष्य को सार्थक बनाने के लिए वर्तमान को परिष्कृत एवं समृद्ध करती है। इस प्रकार यह संस्कृति का आदर्श रूप है। इसी भविष्य को प्राप्त करने के लिए सुब्रह्मण्यम भारती ने हमें निम्नलिखित शब्दों में प्रोत्साहित किया-

यह भारत एक प्राचीन देश है। यह मत भूलो, आप इसकी संतान हो,
यह देश सभी राष्ट्रों का अलंकार है। यह मत भूलो, आप इसकी संतान हो।

-5 दिसम्बर, 1991

भाजपा साम्प्रदायिकता के जरिये सत्ता चाहती है

संसद में अविश्वास प्रस्ताव पर बहस के दौरान श्री अर्जुन सिंह का भाजपा को करारा जवाब

आपने जब भारत की मानसिकता की बात कही है तो यह न तो 1947 से न 1950 से और न ही 1960 से शुरू होती है। यह मानसिकता तो उस समय से शुरू होती है जब इस गुलाम देश में आजादी की लड़ाई शुरू हुई थी और उससे सारे भारत की मानसिकता बनी, जिसके दवाब में आकर दुनिया के सबसे बड़े साम्राज्यवादी देश को घुटने टेकने पड़े। आप वहां से उस मानसिकता को जोड़ने की कृपा करें। प्रश्न यह है कि ऐसे समय में आपने स्वयं कहा कि रामजन्म भूमि का मामला अदालतों में पचास साल पहले से भेज दिया गया। मूर्तियां वहां रख दी गईं। अदालत ने कुछ आदेश दिए। पचास साल पहले से यह विवाद चल रहा है और उससे पहले भी चल रहा होगा। आज आपसे और आपके दल से देश यह सवाल पूछना चाहता है कि वह कौन सा क्षण था, वह कौन से कारण थे जिनकी वजह से अदालतों में चल रहा यह विवाद आपने देश के राजनीतिक क्षेत्र में लाकर खड़ा किया? आप चलने देते जहां चल रहा था। उसका इस पचास साल में नहीं हुआ तो बीस साल और चलता। आपने एक निर्णय लेकर किसी क्षण, यह फैसला किया कि यह विषय अदालत में नहीं, भारतीय प्रजातंत्र के आंगन में निपटाया जाएगा। यह चुनाव का विषय बनेगा, इसके द्वारा सारे देश में आप एकता को भंग करने वाला वातावरण पैदा करेंगे। आपने निर्णय लिया कि वही एक वातावरण है जो आपको सत्ता प्राप्ति में सहायता दे सकता, इसकी शुरूआत वहां से है।

आपने एक बार तय कर लिया कि सब तरह के तरीके अपनाए जा चुके हैं, हर तरीके से आपने कोशिश कर ली लेकिन अपने मकदस में कामयाब नहीं हुये आप राजनैतिक दल के नाते सत्ता प्राप्त करना चाहते हैं, यह आपका वाजिब हक भी है और आपको पूरा अधिकार है। लेकिन यदि उस सत्ता प्राप्ति से आप दूर रह गए हैं, तो जितने भी ऐसे बिन्दु हैं, जो प्रजातंत्र में पार्टियों को, व्यक्तियों को सत्ता में ले जाते हैं या सत्ता से च्युत करते हैं, अगर उस सीमा में बंधकर आपने यह प्रयास किया होता और यदि आप हिन्दुस्तान की सल्तनत चला रहे होते तो किसी भी प्रजातंत्र में विश्वास करने वाले व्यक्ति को जरा भी संदेह न होता न शिकायत होती और न किसी को दुःख होता। लेकिन आपने संविधान के परे, देश के कानूनों के परे, भारत के लोगों की भावनाओं के परे इस विषय को सत्ता प्राप्ति का एक रास्ता बना लिया और फिर जैसा प्रचार हुआ, वह प्रचार प्रजातांत्रिक मान्यताओं के अंदर रह ही नहीं सकता आपने एक फैसला किया कि हिन्दुत्व की भावना को उभाड़कर इस देश के लाखों, करोड़ों लोगों की मानसिकता ही बदल दी जाये कि हिन्दू हो तो यह रास्ता चुनो क्योंकि आपने अपने आप ही यह घोषित कर दिया कि भारत सभी हिन्दुओं के आप ही एकमात्र प्रतिनिधि हैं।

क्या 1965 में अयोध्या में मंदिर का विवाद नहीं था, 1952 में नहीं था, 1972 में नहीं था, फिर क्या कारण है कि अचानक 1980 के दशक में भारतीय जनता पार्टी को यह प्रेरणा मिली- कहां से मिली यह मुझे नहीं मालूम कि अब और

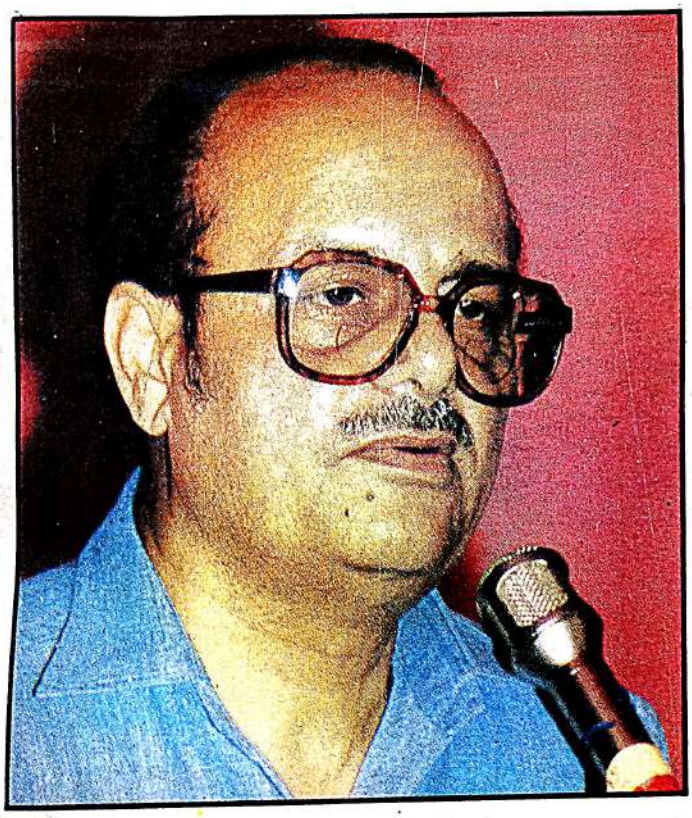

सब रास्ते तो बंद हैं मंदिर का रास्ता ही चलने के लिये एकमात्र ऐसा रास्ता है जिस रास्ते पर चलकर शायद आप सफलता प्राप्त कर सकें। यह भूल है और इसके लिये अटल बिहारी वाजपेयी जी आप क्षमा मांगें या न मांगें, आप बहुत उदार हैं। किसी समय आप क्षमा मांग भी सकते हैं लेकिन इतना निश्चित मानिए कि भारत के लोग इतने गैर समझदार नहीं हैं कि वे न समझें कि यह बात कहां से शुरू हुई है और कहां ले जाने की कोशिश की जा रही है। बीच में अलग-अलग पड़ाव हैं जहां पैंतरे बदलते रहे हैं लेकिन इन पैंतरों से भारत का संविधान प्रभावित नहीं होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

आपने स्वयं महसूस किया कि प्रधानमंत्री चाहते थे और ऊपर से लेकर, मैं किसी का नाम नहीं लेना चाहता हूं, एक भी व्यक्ति, जो आपके पक्ष की ओर से प्रधानमंत्री से मिला, उसने सिवाय वायदा करने के, शपथ देने के, उनको विश्वास दिलाने के और कोई बात नहीं की और एक ऐसे संवेदनशील व्यक्ति को जो दूसरों पर भरोसा करना चाहता है, जो समाज और देश को एक रास्ते पर चलाने के लिए अपने तरीके से प्रयास कर रहा है, शांतिपूर्ण तरीके से हल निकालने की कोशिश कर रहा है, अगर आपके आचरण ने उनको आहत किया है तो इसका दोष आप पर है, प्रधानमंत्री पर नहीं। सवाल यह है कि आपने ऐसा क्यों किया? **आप सब लोगों के खेल से मैं थोड़ा बहुत परिचित हूं और यह जो खेल आप समय-समय पर खेलते हैं, मैं उसका स्वरूप भी पहचानता हूं। उसका उद्देश्य भी जानता हूं। मैं आपकी जानकारी के लिए यह बताना चाहता हूं कि 1947 में भारत के विभाजन के समय जब आपने सोचा था कि इससे बढ़कर और अच्छा मौका नहीं मिलेगा, लाखों लोग देश में इधर से उधर जा रहे हैं एक भावना तीव्र हो रही है, हिन्दुओं की भावना को और जागृत करने का यह**

समय है और आपने यही किया भी उसकी परिणति गांधी जी की हत्या में हुई। उस समय कांग्रेस पार्टी ने आपके इन प्रयासों को रोकने के लिए एक नेशनल वालंटियर कोर बनाई थी यहां पर जो पुराने कांग्रेस के साथी हैं वे इस बात को जानते होंगे, मैं उसका एक छोटा सा कार्यकर्ता था और आपके खिलाफ लड़ना मैंने 1947 से शुरू किया। इसलिए मैं पहचानता हूं लेकिन मुझे पूरा विश्वास था कि देश में शांतिपूर्ण तरीके से हल निकालने की प्रधानमंत्री की भावना, उनका प्रयास, उसका कुछ तो आदर आप करेंगे। जो हाल आपने किया है शायद ही भारत के इतिहास में किसी भी राजनीतिक दल ने किया हो। क्या हम में से कोई चाहता है कि ऐसा हो? क्या हम में से कोई ऐसा चाहता है कि भारत के अंदर फिर से विप्लव हो, आपसी लड़ाई हो। अगर हम नहीं चाहते हैं तो यह मौका है एकता, मजबूती का, ऐसे लोगों को उनका स्थान दिखा देने का जो भारत के भविष्य की चिंता नहीं करते, जो देश की एकता की चिंता नहीं करते। उनको केवल चिंता यह है कि किस प्रकार से कूदकर- फांदकर पहले पहुंच जाएं सत्ता की कुर्सी तक। लेकिन मैं आपको बताना चाहता हूं, आपको मालूम भी है और नहीं मालूम है तो सुन भी लीजिए। इस देश का प्रजातंत्र कई चुनौतियों का सामना कर चुका है। इस देश में एकता की भावना, धर्मनिरपेक्षता की भावना, भाईचारे की भावना हमने-आपने नहीं दी है, हजारों-हजारों साल से यह हिन्दुओं की उदात्त भावना का अंग है। मैं समझता हूं कि देश में सैक्यूलरिज्म की बात अगर मजबूत हुई है तो किसी व्यक्ति की वजह से नहीं हुई है। यह स्वाभाविक आचरण रहा है इस देश के करोड़ों-करोड़ों लोगों का, हजारों-हजारों साल से, उसकी वजह से यह मजबूत हुई है।

आपने एक ऐतिहासिक तथ्य का जिक्र करके कुछ कटाक्ष करने की कोशिश की कि जब धृतराष्ट्र के दोनों तरफ दुःशासन और दुर्योधन बैठे थे। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि क्या महाभारत का इतना ही अंश आपको मालूम है? क्या आपको भीष्म पितामह के अंतिम क्षणों का ज्ञान नहीं है जब उन्होंने सबको अंतिम उपदेश दिये? उसमें एक उपदेश यह भी था, मैं कोई माईथौलॉजी से अपने को नहीं जोड़ता हूं। यह तो आपकी कोशिश है, जहां तक मेरी जानकारी है कभी-कभी सत्ता की प्राप्ति के लिये देश को विभाजित करके भी लोग सत्ता को बचाना चाहते हैं। जब सारे देश को विभाजित करने का खतरा हो तो शंका मत कीजिए, बार-बार महाभारत हो तो बार-बार होना चाहिए। देश बचना चाहिए, राष्ट्र धर्म बचना चाहिए, यही था महारथी भीष्म पितामह का अंतिम संदेश, जिसको आज आपने चुनौती दी है। महाभारत तो आपने चला दिया। शायद बहुत लोगों को मालूम नहीं है। आपने जो छः दिसम्बर 92 की तारीख का मुहुर्त निकाला था वह भी कहते हैं कि महाभारत से संबंधित करके ही निकाला था। सही, गलत मैं नहीं जानता, यह तो वाजपेयी ही जानते होंगे। आप तो महाभारत की ओर बढ़ना चाहते हैं लेकिन महाभारत इन कमजोर कंधों पर नहीं हो सकता। ये कंधे तो केवल लुक-छिपकर घात करना चाहते हैं। आमने-सामने की लड़ाई में, चाहे वह प्रजातांत्रिक लड़ाई हो या कैसी भी हो,आपके टिकने का सवाल ही नहीं है।

आज एक बहुत सीधी रेखा खींच दी गई है। उसमें कभी रेखा के उस पार पांव रखना और कभी इस पार पांव रखना अब समय का तकाजा नहीं है। अब समय का तकाजा यह है कि जो चुनौती आपने समूचे राष्ट्र को दी है, उस चुनौती का सामना राष्ट्र करता है या नहीं, इस देश में रहने वाले सारे व्यक्ति करते हैं या नहीं। आज अलग-अलग राजनैतिक मामले में किसी भिन्न की विचारधारा हो, किसी अन्य विषय पर हो लेकिन एक मौलिक प्रश्न पर सब एक हो सकते हैं। उन्हें एक तरफ रहना चाहिए। आप कृपा करके उस सीमा रेखा के एक ही पार रहिए, दोनों तरफ पांव न रखिए और इस युद्ध

को होने दीजिये। निश्चित रूप से यह प्रजातांत्रिक युद्ध होगा। शांतिपूर्ण युद्ध होगा। इस देश के करोड़ों लोगों के दिल और दिमाग के लिए युद्ध होगा। मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं कि इस युद्ध में देश की प्रजातांत्रिक शक्तियां जीतेंगी ऐसी धर्मनिरपेक्ष शक्तियां जीतेंगी जो राष्ट्र को एक बनाकर रखना चाहती हैं, जो सबको एक साथ मिलकर, लेकर जाना चाहती हैं, जो इस राष्ट्र की छवि हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई के चेहरे पर नहीं देखतीं। जो भारतीय नागरिक का चित्र हैं, वही चित्र हिन्दुस्तान में सर्वमान्य होगा। इस कटी-फटी हुई मानसिकता से आप उस चित्र को खंडित नहीं कर सकते हैं।

हिन्दुओं की बात आप करते हैं। मैं गर्व करता हूं कि मैं हिन्दू हूं। मुझे इस बात का बहुत बड़ा अभिमान है कि मैंने एक हिन्दू के घर में जन्म लिया। हिन्दुओं के रीति-रिवाजों से मैं पूरी तरह परिचित हूं। मैं उनसे बंधा हुआ हूं लेकिन एक बात समझ लेनी चाहिए कि चाहे हिन्दू हो या मुसलमान, मैं किसी मंदिर की सीढ़ियों पर बिल्कुल भिक्षुक के नाते अपना जीवन का अंत करना पसंद करता हूं, लेकिन जब भी कोई अधिकार, जो संविधान में प्रदत्त होगा, उसके उपयोग करने का सवाल आयेगा तो मैं न हिन्दू हूं, न मुसलमान हूं, न सिख हूं, न ईसाई हूं, एक भारतीय हूं एक भारतीय के नाते हमारा एक ही धर्म है, वह राष्ट्र धर्म है। अगर उस धर्म पर कभी आंच आई, चोट आई, तो एक भारतीय के नाते हम मुकाबला करेंगे।

–लोकसभा : दिसम्बर 1992

कांग्रेस को पूरी ईमानदारी से देना होगा साम्प्रदायिकता का जवाब

कांग्रेस कार्य समिति में अर्जुन सिंह का आधार वक्तव्य जो 8 फरवरी 93 को उन्होंने प्रस्तुत किया

यह बैठक किसी व्यक्ति विशेष का समर्थन अथवा विरोध करने के लिए नहीं, बल्कि कांग्रेस पार्टी ने देश को अप्रैल 1992 के तिरुपति महाधिवेशन में जो स्पष्ट दिशा निर्देश दिया था, उसके बाद की स्थिति का जायजा लेने के लिए है। हमें अपने आप से यह प्रश्न करना होगा कि एक वर्ष से भी कम की अवधि में हम देश और पार्टी को कहां ले आये हैं?

हर कदम पर सांप्रदायिक ताकतों का मुकाबला करने के लिए एकजुट होने बाबत तिरुपति से दिये गये आह्वान से चलकर आज हम ऐसी स्थिति में हैं कि जिन ताकतों से टक्कर लेने का हमारा इरादा था वे भारत पर हावी हो गयीं तथा हमारा गणराज्य, जिसे महात्मा गांधीजी के नेतृत्व में असंख्य स्वतंत्रता सेनानियों के बलिदान और वेदना से हासिल किया गया था, अब बिखराव के खतरनाक दौर पर है। क्या हमारी पार्टी इस स्थिति में मात्र विवश दर्शक बनी रहेगी?

राष्ट्र सेवा और बलिदान की परम्परा में केवल आठ वर्ष पूर्व शताब्दी मनाने वाली इस पार्टी को यह बताए जाने की पात्रता तो होगी, कि किन संकेतकों के जरिए हम आज इस स्थिति में अपने आप को पाते हैं? मैं किसी पर दोषारोपण नहीं कर रहा हूं और यदि मैं इस प्रश्न के उत्तर की अपेक्षा करूं तो संभवतः मैं किसी अनुशासन के मानदण्ड की अवहेलना भी नहीं कर रहा हूं– क्योंकि यह प्रश्न हजारों-हजारों कांग्रेसजनों और वास्तव में, करोड़ों-करोड़ों देशासियों की जुबान पर है। पार्टी के एक विनम्र सिपाही की हैसियत से, और परिस्थितियों से घिरे हुए इस गणराज्य के एक व्यथित नागरिक के नाते, इस प्रश्न को यहां उठाने के इस अपराध के लिए यदि हो सके तो मुझे आप कृपया क्षमा करें। तथापि, उत्तर देते समय कृपया आप यह अवश्य याद रखें कि हम सभी उस कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्य हैं, जिस राजनीतिक इकाई का हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में एक पवित्र स्थान है। इसी समिति ने 9 अगस्त, 1942 को अंग्रेजो भारत छोड़ो का आह्वान किया था और बापू द्वारा प्रशस्त, करो या मरो, के मार्ग का करोड़ों देशभक्तों ने अनुसरण किया था।

आज हमें यह नहीं मालूम कि करना क्या है– हां, हजारों निर्दोष महिलाएं और बच्चे बम्बई, सूरत, कानपुर और देश के कोने-कोने में कई शहरों और कस्बों के मौत के गलियारों में झोंके जा रहे हैं। इन निर्दोष पीड़ितों की असंदेही आंखें यह जानना चाहती हैं कि उन्हें क्यों, और किसके लाभ के लिए,जिन्दगी से महरूम किया जा रहा है।

ये प्रश्न, भले ही कितने ही अप्रिय और तकलीफ दायक क्यों न हों, लेकिन इनका पूरी ईमानदारी से जवाब देना होगा और तभी हम कांग्रेस और देश को नेतृत्व देने का सही हक हासिल कर सकेंगे।

कांग्रेस उत्तर के इन्तजार में हैं– राष्ट्र भी, उत्तर की प्रतीक्षा में है।

-8 फरवरी 1993

अखबारों की नजर में अर्जुन सिंह

(हम आभारी हैं उन सभी समाचार पत्र व पत्रिकाओं के जिनके लेख, सम्पादकीय और साक्षात्कार के कुछ प्रमुख अंश यहां हमने लिए हैं। स्थानाभाव के कारण प्रकाशित सामग्री को हमें कहीं-कहीं संक्षिप्त करना पड़ा है।)

आप मानते हैं कि सैक्यूलर और धर्मनिरपेक्ष एक-दूसरे के समानार्थी हैं? एक प्रसिद्ध इतिहासविद् के अनुसार हमारी परिभाषा यूरोप की विकसित परिभाषा के विपरीत है। यूरोप में सैक्यूलरिज्म धार्मिक प्रभावों के विरोध में विकसित हुआ जबकि भारतीय संदर्भ में जब हम धर्मनिरपेक्षता की परिभाषा करते हैं तो उसमें धर्म अनिवार्य रूप से मौजूद रहता है, राज्य और राजनीति द्वारा विरोध नहीं बल्कि स्वीकार्य भाव के साथ

● देखिये, इतिहास और दर्शन इनमें लोगों के अलग-अलग दृष्टिकोण मिलते हैं। जहां तक मैं समझता हूं हमारे देश में अनेक धर्मावलंबी निवास करते हैं और इसी संदर्भ में हमारे यहां सैक्यूलरिज्म को देखा-समझा जाता है। भारत में हजारों बरसों से विभिन्न धर्मों, विश्वासों और आस्थाओं का समाज आदर करता रहा है। आजादी के बाद संविधान बनाते समय यह आवश्यक था कि हमारी इस विरासत को एक संवैधानिक स्वरूप दिया जाये। इस शब्द का किसी और देश मे क्या अर्थ लगाया जाता है और किस संदर्भ में देखा जाता है, मेरे ख्याल से यह सवाल ही नहीं उठता। देश के संविधान में स्पष्ट रूप से प्रत्येक धर्म के मानने वालों को समान अधिकार दिये गये हैं। साथ ही यह भी कहा गया है कि दूसरे धर्म का सम्मान भी किया जाये। भारत में हिन्दू बड़ी मात्रा में है और मुझे यह कहते हुये गर्व का अनुभव होता है कि हिन्दू धर्म उदारता, सहिष्णुता और आत्मसात करने की असीम क्षमता पर आधारित है। आप इनमें से किसी एक को हटा दें तो वह हिन्दू धर्म ही नहीं रह जायेगा।

आपने कहा था कि देश की मौजूदा परिस्थिति में धर्मनिरेक्षपता ही काफी नहीं है बल्कि सांप्रदायिकता और सांप्रदायिक दलों और गठबंधनों का सतत् विरोध भी जरूरी है। इसे कार्यरूप में परिणत करने और व्यवहारिक बनाने के लिये आपकी सरकार क्या कर रही है?

● अभी मैंने जिन कुछ मान्यताओं का जिक्र किया है उनके विरोध में भी हमारे देश में कुछ न कुछ होता रहा। अपने लेख में मैंने इसी संदर्भ में उक्त बात की थी। लोगों को यह विश्वास है कि ये मान्यताएं ही हमारे देश की विरासत को परिभाषित करती हैं उन्हें सतर्क रखकर इन मान्यताओं के खिलाफ जो विचार और प्रचार है उनके विरोध में आवाज उठानी होगी और संघर्ष भी करना होगा। जहां तक हमारी पार्टी का सवाल है तो कांग्रेस ने इस विरासत को हमेशा अपना बहुमूल्य अंग माना है। इसे केंद्र में रखकर उसने अपने राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक कार्यक्रमों को संचालित करने का प्रयास किया है।

भाजपा सरकारों ने कुछ ऐतिहासिक स्थलों और मुस्लिम नामों को राष्ट्रीय शर्म या गुलामी का प्रतीक बता बदलने की कोशिश की है। जैसे मुगलसराय को दीनदयाल उपाध्याय नगर या बेगम हजरत पार्क को उर्मिला वाटिका वगैरह। क्या यह हिंदू उन्माद को बढ़ावा देना नहीं होगा?

● यह तो बचकानापन है ... यह किसी को बढ़ावा देना या किसी को अपमानित करने वाली नहीं है। आज हिंदुस्तान में जो कुछ भी अच्छा-बुरा है वह सबका है .. अगर हम अपनी विरासत को खंडित करके देखने की कोशिश करेंगे तो विरासत तो खंडित होगी ही, एक दिन देश भी खंडित हो जाएगा।

-नव भारत टाइम्स के लिए श्री शानी द्वारा साक्षात्कार

साम्प्रदायिक एकता और सद्भाव के एक सम्मेलन में श्री अर्जुन सिंह से चर्चा करते हुये पुस्तक के लेखक मदन मोहन गुप्त।

भीड़ में अलग चेहरा

श्री अर्जुन सिंह के उनके गृह क्षेत्र में आगमन पर विन्ध्य क्षेत्र के प्रमुख समाचार पत्र दैनिक जागरण में प्रकाशित एक भावपूर्ण लेख

अर्जुन सिंह जी कितने भी अंतराल के बाद बांधव भूमि में क्यों न आयें, उनके आने पर हर बार इस वसुन्धरा पर रचे-बसे लोगों को एक नया उत्साह, एक नई उमंग और एक अवर्णित प्रेरणा हमेशा से मिलती रही है। जो स्नेह कुंवर साहब को इस माटी से है और जो सम्मान उन्होंने यहां के जनजीवन को दिया है, उसकी अंतरंगता यहां के लोगों के दिलो-दिमाग में सदा से बनी रही है।

आज जबकि श्री सिंह एक बार फिर से हमारे बीच हैं, तब जहां एक ओर यहां की जमीन और उससे जुड़े लोग उन्हें अपने बीच पाकर हर्षित हैं वहीं दूसरी ओर उनके ओठों पर अजीब सी खामोशी है। उनकी निगाहों में एक सवाल, कि क्या होगा इस देश का भविष्य और कितने सक्षम होंगे आज की परिस्थितियों में अर्जुन सिंह जी के हाथ इस देश में हिंसा, भय और साम्प्रदायिकता की लपटों को बुझाने में।

जहां तक विन्ध्य के इस सपूत का प्रश्न है तो यह उसके हर कदम और हर वाक्य

से, उसकी लेखनी और उसकी वाणी से स्पष्ट रहा है कि देश पर आने वाले धर्मान्धता के इस काले बादल का उनको बहुत पहले से, बहुत साफ एहसास था। तभी तो अर्जुन सिंह जी बार-बार आगाह करते रहे थे, न सिर्फ भारतवासियों को बल्कि कांग्रेस के शीर्षस्थ नेतृत्व को भी भारतीय जनता पार्टी का मुखौटा पहने साम्प्रदायिक शक्तियों से जूझते रहने के लिए।

न जाने ये कैसी विडम्बना रही कि जहां साम्प्रदायिक शक्तियों से लडने की पुरजोर आवाज से वो शक्तियां जो धर्मान्धता का सहारा लेकर सत्ता का मार्ग तलाश रही थी वो तो अर्जुन सिंह जी की प्रबल शत्रु बन ही बैठी, पर जब-जब उन्होंने इस देश की मिट्टी को साम्प्रदायिकता के खून में सनने से बचाने की कोशिश की तब-तब कांग्रेस के अंदर भी एक खुसफुसाहट मचने लगी।

जब देशभक्ति से ओतप्रोत राजनीति के इस पण्डित ने प्रधानमंत्री के सलाहकार श्री जितेन्द्र प्रसाद को 2 अगस्त 1992 में एक पत्र लिख कर समय रहते अयोध्या के मामले में साम्प्रदायिकता की आग उगलने वाली राजनीतिक पार्टी और उससे जुड़े संगठनों के प्रति कांग्रेस के सभी शीर्षस्थ नेताओं को बुलाकर एक साफ और कड़ी नीति तय करने को कहा तो जहां एक ओर कांग्रेस के विरोधी दलों और संगठनों की छाती तेजी से धकधकायी, वहीं दूसरी ओर कांग्रेस के अंदर एक ऐसा हंगामा इस चिट्ठी को लेकर बरपा जिसे कि सारे देश ने देखा और सुना।

आज वही लोग जो इस चिट्ठी पर या उससे भी पहले भाजपा पर प्रहार करने पर अर्जुन सिंह जी की आलोचना करने से नहीं चूकते थे आज भी यह स्वीकार करते हैं कि यदि तब इस बात को मान लिया जाता और अर्जुन सिंह की सलाह पर कांग्रेस जैसी राष्ट्रव्यापी पार्टी एक स्पष्ट और सोची समझी नीति तय कर लेती तो आज बाबरी मस्जिद के रूप में देश का विश्वास न ढहा होता, लोकतंत्र की जड़ें न हिली होतीं और संविधान पर जनता की आस्था बरकरार रहती।

इसीलिए आज शायद विन्ध्य के लोगों की सवालिया निगाहें खामोश ओठों के साथ ताक रही है अपने इस लाड़ले नेता को कि जब आपकी बात,आपकी चेतावनी और आपकी सलाह न मानने पर हजारों हिन्दुस्तानियों के खून से उनकी अपनी ही जमीन रंगी जा चुकी है अब तक, तब ऐसे में क्या अब भी यह खूंरेजी, ये हिंसा, यह धर्मान्धता, यह भाई-से-भाई को लड़ाने वाली घातें रोके रुकेंगी, आपकी पार्टी से और आप से, या नहीं?

जहां तक सवाल आता है अर्जुन सिंह जी का आज की परिस्थिति में इस देश की रक्षा के लिए तो उन्होंने तो ... कृष्ण के उस अर्जुन जैसे अपना लक्ष्य साफ निर्धारित कर रखा है और भगवान श्री कृष्ण के शाश्वत उपदेश **'कर्मण्यै वाधिकास्ते मा फलेषु कदाचन'** का पालन करते हुए अपने लक्ष्य के संधान में अपना सर्वस्व झोंक रखा है क्योंकि मैंने प्रत्यक्ष दो उदाहरण इसके स्वयं मौजूद रहकर देखे जिनके आधार पर मैं यह आज पूरी सच्चाई के साथ लिख सकता हूं कि ९ दिसम्बर को जब हिन्दुस्तान के कई दूसरे शहरों के साथ भोपाल हिंसा की आग में धधक रहा था, ऐसे में या तो गोलियों की आवाजें कानों में पड़ती थीं या फिर निरीह जनता की करुण पुकार-मार डाला-मार-डाला, अरे कोई तो बचाओ! एक और तीसरी आवाज भी तमाम लोगों की दबे स्वरों में घरों के अंदर बंद टी. वी. या रेडियो पर राष्ट्रीय और प्रादेशिक नेताओं की सुनाई देती थी कि देश में भाईचारा और सौहार्द्र बनाये रखें पर तब तक भी कोई माई का लाल पूरे हिन्दुस्तान में दंगा पीड़ितों के बीच नहीं गया था दंगाइयों को रोकने।

ऐसे में भोपाल में 9 दिसम्बर की काली स्याह रात में एक फरिश्ते के मानिन्द ही विन्ध्य की माई का यह लाल आ पहुंचा और बिना किसी की परवाह किये रात 12 बजे से भोर के 4 बजे तक भारत वर्ष का यह अकेला राजनेता गली-गली, दरवाजे-दरवाजे रात की स्याही को चीरता हुआ गया। उसने यह नहीं देखा कि यह दर मुसलमान का है या वह दरवाजा हिन्दू का। मुझे याद है बखूबी.. कि जब अर्जुन सिंह जी के आने के बाद 10 तारीख की सुबह सहमे हुए सौ दो सौ कांग्रेसी और हिंसा से

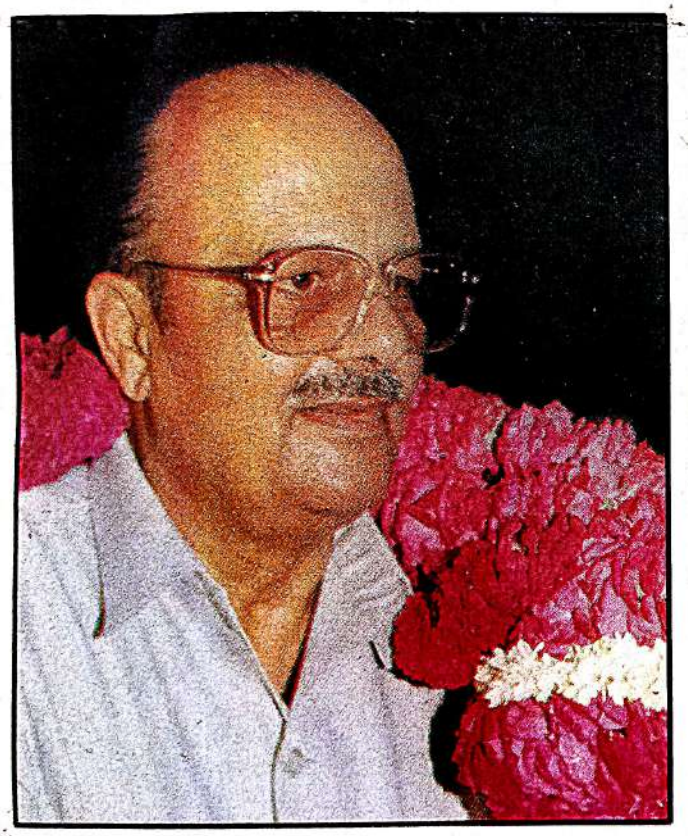

पीड़ित कुछ लोग तथा मुट्ठी भर पत्रकार डरे हुए प्रदेश कांग्रेस कार्यालय पहुंचे तो लोगों का दुख दर्द देखने और सुनने के बाद अर्जुन सिंह जी के ओंठ थर्राये। उनकी एक आंख से मुस्लिमों का गम झलका तो दूसरी से हिन्दुओं का दुख भरी सभा में बह निकला। उन्होंने भरे गले और छलकती आंखों से सिर्फ इतना कहा कि मैं कुछ कहूंगा नहीं बल्कि करके दिखाऊंगा। इसकी परिणति थी मध्यप्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश की भाजपा सरकारों का भंग होना और उनके इस साहस का परिणाम था अन्य नेताओं का विवश हो दंगे में पीड़ित लोगों के बीच अर्जुन सिंह जी के जाने के बाद निकलना।

इसीलिए मैंने लिखा कि भीड़ में एक अलग चेहरा-क्योंकि वह बात जिसकी पहल अर्जुन सिंह जी करते हैं, वह मुझे दूसरे करते दिखाई ही नहीं देते। इससे बड़ा इसका क्या उदाहरण हो सकता है कि .. 17 जनवरी की शाम राष्ट्रपति भवन जगमगाता हुआ अशोका हाल और श्री नरसिंहराव के मंत्रिमंडल के त्यागपत्र के बाद महामहिम राष्ट्रपति और सम्माननीय प्रधानमंत्री के समक्ष न सिर्फ कांग्रेस के तमाम त्यागपत्र देने वाले पूर्व मंत्रीगण, न सिर्फ कई संसद सदस्य इस पार्टी के बल्कि राजधानी के चुने हुए चन्द संभ्रांत नागरिक और देश के चुने हुए लगभग 60-70 पत्रकार, ये सब उत्सुकता से देख रहे थे भावी मंत्रिमंडल और इस देश के आने वाले भविष्य की ओर। आलम तो यह था कि जो मंत्री दिल्ली के बाहर थे वो भी ताबड़तोड़ पांव-पावड़े दौड़ते हुए दिल्ली आ पहुंचे थे और झाड़फानूस की रोशनी से जगमगाते हुए इस हाल में, जिसकी छत पर खूबसूरत मुस्लिम शैली के शिकार चित्र सजे हुए हैं, उर्दू की आयतें लिखी हैं, जिसके अंदर मुस्लिम मलिका का सलीजा चित्र है और जिसकी गैलरी में भारत के प्रथम राष्ट्रपति स्वर्गीय राजेन्द्र प्रसाद जी के साथ ही एक खूबसूरत पेंटिंग लगी है, बालक शहंशाह अकबर की ताजपोशी की, ऐसे भव्य स्थल पर जहां इस समूचे राष्ट्र के सभी प्रबुद्ध लोग धर्म, जात-पात सब छोड़ यह सोच रहे थे कि कैसा होगा मंत्रिमंडल? और कैसे

चलेगा देश? तब भी एक व्यक्ति व एक शख्सियत जो दिल्ली के राष्ट्रपति भवन के अशोका हाल, दरबार की हदों को तोड़ती हुई सारे देश में चर्चित हो रही थी, वही गैर मौजूद थी और उसी को बार-बार ढूंढ रही थी अधिकांश आंखें। वो शख्सियत, वो चेहरा था कुंवर साहब का जो पूरे हिन्दुस्तान में एकमात्र इकलौते कांग्रेसी नेता थे जिन्होंने अशोका हाल की प्रथम कतार में रखी कैबिनेट मिनिस्टर की कुर्सी की जगह उस समय अपने पूर्व निर्धारित कार्यक्रम को रद्द न करते हुए बुन्देलखंड की जनता के बीच रहकर अपनी बात कहने, कांग्रेस की बात कहने और साम्प्रदायिक धर्मान्धता को बेनकाब करने को अधिक महत्व दिया था। ये था कांग्रेस के सच्चे सिपाही का सच्चा रूप। ये था जनसेवक का, जनता की सेवा का वास्तविक स्वरूप।

यही चंद बातें हैं जो उन्हें भीड़ में एक अलग चेहरा बनाती हैं क्योंकि आज न सिर्फ कांग्रेस के वरन् हिन्दुस्तान के तमाम समभाव और सद्भाव रखने वाले लोगों की ओर से दोस्ती-दुश्मनी की परवाह किये बिना इस वीर योद्धा अर्जुन की छाती तनी हुई है धर्मान्धता और साम्प्रदायिकता से भारत की रक्षा करने को।

अपनी बात इकबाल साहब के एक शेर के साथ पूरी कर रहा हूं जो आज की हालत में अर्जुन सिंह जी पर बहुत मौजू है-

कुछ बात तो है कि हस्ति मिटती नहीं हमारी
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहां हमारा।

-23 जनवरी 1993 दैनिक जागरण, रीवा

अयोध्या की घटनाओं पर प्रस्तावित श्वेतपत्र को एक मुद्दा बनाने के पीछे श्री अर्जुन सिंह के चाहे जो इरादे हों, किंतु उनकी असंतुष्टि से उपजे विवाद ने कांग्रेस और देश के भीतर उस अकुलाहट को और अधिक बढ़ाया ही है जो छह दिसम्बर १९९२ के पहले अयोध्या मसले पर श्री नरसिंहराव की कोशिशों से पैदा हुई थी। इसलिए ऐसा कोई सवाल कि अर्जुनसिंह के इन इरादों के पीछे किसी तरह के संकीर्ण राजनैतिक उद्देश्य हैं, कोई अर्थ नहीं रखता, बल्कि उससे अधिक महत्वपूर्ण है यह धारणा, जिसे श्री राव ने स्वयं बनने दिया, कि इस मुद्दे पर वे सभी तथ्यों को जाहिर करने के कदापि इच्छुक नहीं हैं। इससे इस सन्देह को बल मिलता है कि संघ परिवार के साथ निश्चित रूप से उन्होंने कोई मिला-जुला खेल खेला है। बाबरी मस्जिद को ध्वस्त होने से बचाने के लिए शासन द्वारा किस तरह के प्रयास किए गए, श्वेत पत्र में इसका अधिकृत विवरण दिया जाना अनिवार्य है। छह दिसम्बर के पटाक्षेप के बाद देश को ऐसे श्वेतपत्र के जारी किये जाने के बाबत आश्वस्त भी किया गया था। उदाहरण के लिए प्रधानमंत्री ने लाल किले की प्राचीर से बाबरी मस्जिद की सुरक्षा का आश्वासन दिया था। राष्ट्र अब यह जानना चाहता है कि शासन ने इस आश्वासन को पूरा करने के लिए जो तैयारियां की थीं, क्या वे पर्याप्त थीं। श्वेत पत्र पर जो विवाद उठा है उसमें अपनी निर्दोषिता साबित करने के लिए आतुर सरकार की निष्ठा पर ही गंभीर सन्देह पैदा कर दिए हैं। अब तो यह कानाफूसी भी की जा रही है कि संघ परिवार के विभिन्न सूत्रधारों से प्रधानमंत्री की जो साठ से अधिक बैठकें हुईं, उनका कहीं कोई रिकार्ड ही नहीं है।

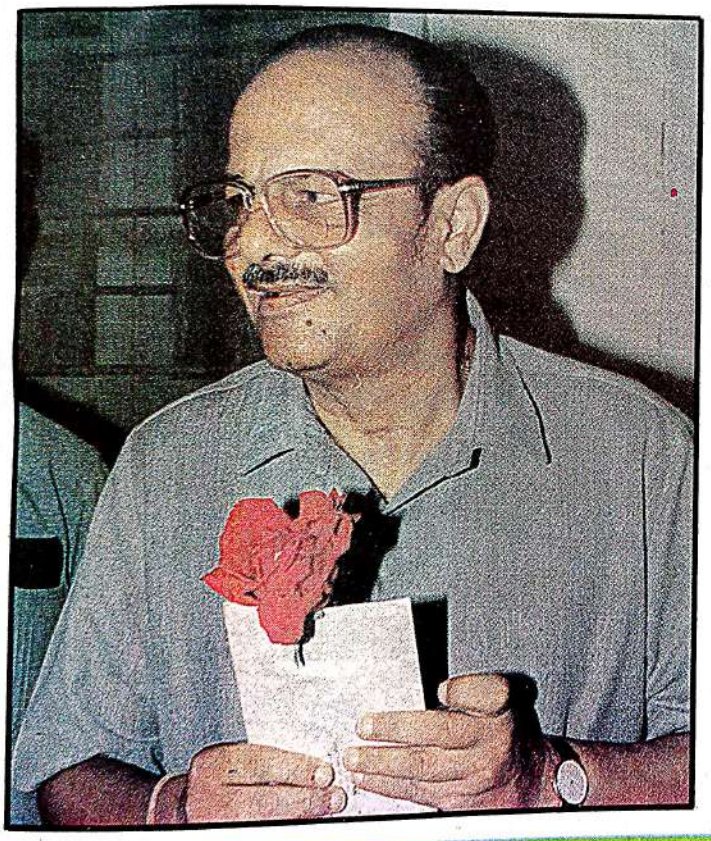

इससे भी बढ़कर, इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर कि बाबरी मस्जिद का ढहाया जाना किसी साजिश का नतीजा था, सरकार की ओर से अलग-अलग ढंग से कहा जा रहा है। श्री राजेश पायलट का आरोप है कि बाबरी मस्जिद सुनियोजित ढंग से ढहाई गई और इसकी रिहर्सल भी कर ली गई थी। श्री शरद पवार अपने पास ऐसी वीडियो फिल्म होने का दावा करते हैं जिसमें ढांचा गिराने वाले अपराधियों को निश्चित रूप से पहचाना जा सकता है। श्री एस. बी. चव्हाण सदा की भांति अपनी बात का और अपने सहयोगियों के कथनों का खंडन करते हैं। श्वेत पत्र को वास्तव में ऐसा अधिकृत शासकीय विवरण होना चाहिए जो शासन का दृष्टिकोण, जानकारी और उस आधार पर नीतिगत कार्रवाई को स्पष्ट रूप से दर्शा सके। यदि इन तथ्यों को प्रस्तुत करने में पूरी ईमानदारी बरती जावे तो लगता है इससे अनेकों की प्रतिष्ठा पर पानी फिर सकता है। यह भलीभांति स्पष्ट है कि श्री अर्जुनसिंह ने यदि राजनैतिक तरीके से सीधा-सच्चा सवाल उठाया है तो प्रधानमंत्री की प्रतिक्रिया मुद्दे को टरकाने जैसी रही है। नौकरशाहों द्वारा तैयार किए गए श्वेत पत्र के प्रारूप को अंतिम रूप देने के लिए गठित तीन सदस्यीय मंत्रिमंडलीय समिति की अध्यक्षता हेतु अर्जुनसिंह को आमंत्रित करते हुए प्रधानमंत्री ने यह संदेह पैदा किया कि वे इस तरह अर्जुनसिंह को एक जाल में फंसाना चाहते हैं। इस मंत्रिमंडलीय समिति में प्रणव मुखर्जी और दिनेश सिंह जैसे दो नये मंत्रियों को शामिल किया जाना और श्री एस. बी. चव्हाण और शरद पवार को उससे दूर रखे जाने से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री ने इस मामले में राजनीति खेलना चाही। अयोध्या में जब टाइम बम की तरह घड़ी का कांटा खिसक रहा था, प्रणव मुखर्जी और दिनेश सिंह सत्ता के गलियारे में कहीं थे ही नहीं, जबकि एस. बी. चव्हाण और शरद पवार का उपयोग संघ परिवार के साथ हमजोली बढ़ाने में समय-समय पर होता रहा था। इस तरह कूट-युद्ध में श्री अर्जुनसिंह को निशाना बनाने की कोशिश में श्री राव ने कांग्रेस में अनावश्यक रूप से ऐसी खलबली और बेचैनी पैदा कर दी है जिसकी राजनैतिक प्रतिक्रिया अनुपात से कहीं अधिक होगी।

सम्पादकीय, टाइम्स ऑफ इंडिया : ६ फरवरी १९९३, नई दिल्ली व बम्बई

अखबारी दुनियां में कार्टून वह विधा है जो सुर्खियों में रहने वालों के असली चेहरे दुनियां के सामने ला देती है। कार्टूनिस्ट की तीखी तूलिका खबरों में रहने वालों की ऐसी खबर लेती है कि उनकी वास्तविकता कभी लोगों को चौंकाती है तो कभी उन्हें गुदगुदाती है। भारत के सुप्रसिद्ध कार्टूनिस्ट श्री रविशंकर की तूलिका ने अर्जुनसिंह के जीवन के यथार्थ को जिस नजरिये से देखा वह यहां प्रस्तुत है।

और क्या? फोकस लाइट में आने को ही... आप राजनीति के रंगमंच पर अकेला पड़ जाना कहेंगे?

भाजपा का सामना करने के लिए स्पष्ट नीति तय करनी होगी

"पूर्व में कांग्रेस को जो भी चुनौतियां मिलती रही हैं वे कांग्रेस के भीतर ही कुछ व्यक्तियों की महत्वाकांक्षाओं के टकराव के कारण उत्पन्न होती रहीं। कांग्रेस को आदर्शों और सिद्धांतों के आधार पर किसी गंभीर चुनौती का सामना नहीं करना पड़ा। अब भारतीय जनता पार्टी ने कांग्रेस को जो चुनौती दी है, वह किसी कार्यक्रम के आधार पर नहीं बल्कि श्री राम के नाम को आगे बढ़ाकर लोगों की धर्मान्धता को उभारने की सोची-समझी कूटनीति है जिसका धर्म से कोई संबंध नहीं है...कांग्रेस को अब हिन्दी क्षेत्र में अपनी खोई जमीन को वापस हासिल करने के लिये संकल्पित प्रयास करना होंगे, लोगों को भाजपा के प्रचार का खोखलापन और उनके असली इरादों के बारे में बताना होगा...धर्म की अफीम के सहारे लोगों को आखिर कब तक बरगलाया जायेगा। कांग्रेस को ही अपनी शिथिलता और गल्तियों से सबक लेकर भाजपा की चुनौती का मुंहतोड़ उत्तर देना होगा...

-साक्षात्कार 6.10.91 इंडियन एक्सप्रेस

धर्म की अफीम के सहारे भाजपा की राजनीति

"भारतीय जनता पार्टी महज एक राजनीतिक दल नहीं है बल्कि हम इस देश में जिस तरह की लोकतांत्रिक संस्कृति की स्थापना के लिये प्रयत्नशील हैं, भाजपा उसके लिये भारी खतरा है। यदि ऐसी बात नहीं है तो मेरी बात को बकवास मान लें। किन्तु मंदिर या हिन्दुत्व के मुद्दों को उछालकर भावनाओं को जिस तरह भड़काया जा रहा है, उसके प्रति लापरवाही तो नहीं बरती जा सकती। इस खतरे का सामना हम किस तरह करेंगे इस बारे में भ्रम को दूर करते हुये स्पष्ट नीति तय करना होगी।"

-साक्षात्कार, 16.8.92, द वीक

भाजपा के विरुद्ध चेतावनी सत्य निकली

अयोध्या में ६ दिसम्बर को जो कुछ घटित हुआ उसने भारतीय जनता पार्टी के वास्तविक इरादों के बारे में अर्जुन सिंह द्वारा पूर्व में दी गई चेतावनी और उनके उग्र-भाजपा विरोध की सत्यता की पुष्टि कर दी है। अर्जुन सिंह अब इस मौके का पार्टी के शीर्षस्थ नेतृत्व के दिमाग में यह बात बैठाने के लिए उपयोग करना चाहते हैं कि आक्रामक धर्मनिरपेक्षवाद के जरिये ही भाजपा को शिकस्त दी जा सकती है।

वक्त की नजाकत को भली भांति पहचानते हुए उन्होंने मैदानी असलियतों पर अपनी सख्त पकड़ का इजहार किया है।

कव्हर स्टोरी, 15 जनवरी 1993, इन्डिया टुडे,

● पार्टी की वर्तमान स्थिति के बारे में आप क्या सोचते हैं?

- मेरे ख्याल से पार्टी अब सांप्रदायिक ताकतों से लोहा लेने के लिए तैयार हो रही है।

● क्या आप इस तैयारी से संतुष्ट हैं?

- कमी तो हर किसी तैयारी में निकाली जा सकती है। पर धर्म का ढोल पीट-पीटकर भाजपा ने राजनैतिक माहौल खराब कर दिया है। इसका मुकाबला तो होना ही चाहिए।

● क्या आपकी पार्टी में यह बात महसूस की जा रही है?

- कमी तो की जाती है और कमी नहीं। मैं गोलमोल बात नहीं करूंगा। अगर पार्टी इसे महसूस करके काम नहीं करेगी तो अगले आने वाले दिन संकट भरे होंगे।

● क्या आप आत्मविश्लेषण की बात कर रहे हैं?

- कुछ हद तक हां। तिरुपति में इस तरह के हर खतरे के मद्देनजर पार्टी ने सांप्रदायिकता के मसले पर काफी कठोर रुख अपनाया था। यह भी तय किया गया था कि इंका इसका मुकाबला किस तरह करेगी। जिन ताकतों से हमें लड़ना था वे एक साल में ही इतनी मजबूत हो गई हैं कि हम गौण पड़ गए हैं तो निश्चय ही हमें इस पर गौर करना होगा। अपनी गलतियों पर हम खुलकर गौर नहीं करेंगे तो उनसे टक्कर नहीं ले पाएंगे। कुछ लोग इसे आलोचना समझ सकते हैं। लेकिन आलोचना ही तो लोकतंत्र का सार है।

● मगर आत्मविश्लेषण क्या इंका के लिए अजूबा नहीं?

- मैं आपको एक उदाहरण देता हूं। 1989 के चुनाव में पराजय के बाद राजीव गांधी ने आत्मविश्लेषण का सवाल उठाया था। उन्हें बताया गया कि गलतियां हुई हैं और अगर हम ईमानदारी से आत्मविश्लेषण नहीं करते तो वापसी मुश्किल है। और राजीव गांधी ने खुले तौर पर स्वीकार किया था कि हमने वह कार्ड खेला जो हमारा नहीं था, इसलिए मुंह के बल गिरे।

● लेकिन आज परिस्थितियां क्या भिन्न नहीं हैं? तब खुद राजीव गांधी ने आत्मविश्लेषण की बात की थी। अब आप जैसे दूसरे लोग इस पर जोर दे रहे हैं?

- मुश्किल यह है कि लोगों को सही बात मालूम नहीं है और उसके लिए कोई प्रयास भी नहीं करता। इसकी शुरुआत राजीव गांधी ने नहीं की थी। उन्हें स्थिति से अवगत कराया जा रहा था।

● क्या आपका कदम सोचा-परखा हुआ है?

- मैं इतना तो बता ही सकता हूं कि मैंने कोई शगूफा नहीं छोड़ा है। पार्टी को इसकी जरूरत है। अभी तक मुझे ऐसा कोई नहीं मिला जो यह कहे कि इसकी जरूरत नहीं थी।

● फिर पार्टी के वरिष्ठ नेता आपकी आलोचना क्यों कर रहे हैं?

- यह तो उन्हीं से पूछिए। और मेरे पर कतरने या मुझे हाशिए पर धकेलने की कोशिश में जितनी ताकत लगी है, अगर उसकी एक-चौथाई भी भाजपा और सांप्रदायिकता के खिलाफ लगाई जाती तो शायद आज स्थिति भिन्न होती और हम कुछ अधिक ठोस काम कर चुके होते। लोगों के बयानों के पीछे कई तरह की प्रेरणाएं काम करती हैं।

● आप नरसिंह राव पर सवाल क्यों उठा रहे हैं?

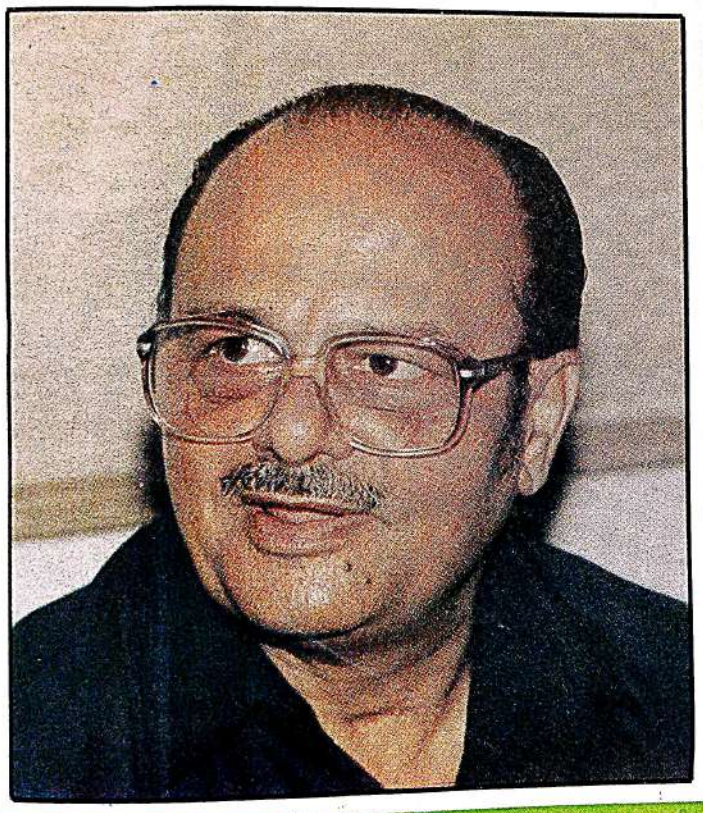

- क्या मैंने नेता पर कभी उंगली उठाई है? मेरा कहना है कि पार्टी में इस मुद्दे पर बहस होनी चाहिए। अगर कोई कहे कि पार्टी को अपना दिमाग बंद करके आगे बढ़ना चाहिए तो मैं नहीं समझता कि वह कदम सही होगा।

● लेकिन आपने क्या कभी भी नेतृत्व की आलोचना नहीं की?

- मुझे जो कुछ कहना चाहिए था उसे मैंने एकदम सही मंचों पर कहा। मगर मैंने किसी तरह की कोई आलोचना नहीं की। मैंने कुछ बातें जरूर नेतृत्व के सामने रखीं, परंतु सार्वजनिक रूप से कभी कुछ नहीं कहा।

● इंका कार्यसमिति की बैठक में क्या एकदम आप अलग-थलग पड़ गए थे?

- ये बातें आप लोगों की बनाई हुई हैं। मैंने कहा था कि इस बारे में अखिल भारतीय इंका समिति में बहस होनी चाहिए। और ऐसा ही होगा। मेरे अलग-थलग पड़ने की बात कहां है? इसके अलावा मैंने राय दी कि चुनाव कानून में बदलाव होने चाहिए ताकि राजनीति में धर्म का इस्तेमाल समाप्त हो सके। तीसरी यह कि पार्टी के वरिष्ठ नेताओं की निंदा बंद हो। ये तीनों बातें मान ली गईं।

● लेकिन क्या आपने अधिवेशन जल्दी बुलाने पर जोर नहीं दिया था?

- मैंने कोई जोर नहीं दिया। मैंने केवल यह कहा कि कुछ लोग अधिवेशन जल्दी बुलाना चाहते हैं। वैसे भी, यह आठ महीने पहले ही बुलाया जाना चाहिए था।

● "एक व्यक्ति, एक पद" के सिद्धांत का क्या हुआ?

- मैंने कहा कि यह सवाल अध्यक्ष पर छोड़ दें।

● आपने तिरुपति में अध्यक्ष के बयान का हवाला देते हुए यह बात कही थी?

- हवाला दिया या नहीं, यह ऐसा मामला है जिस पर मैं कई बार टिप्पणी कर चुका हूं। अब केवल पार्टी अध्यक्ष ही कोई निर्णय ले सकते हैं। इस मसले पर किसी तरह

का कोई टकराव नहीं है।

● क्या इस मसले को अखिल भारतीय इंका समिति के अधिवेशन में उठाया जाएगा?

- वह तो एक ऐसा मंच है जहां कोई भी कुछ भी कह सकता है।

● पार्टी के सामने मंडराता संकट कितना गंभीर है?

- मेरे खयाल से इस संकट ने उस मूल सवाल को ही सामने ला खड़ा किया है कि जिन बुनियादों पर यह लोकतंत्र खड़ा है वे कितने मान्य हैं। दूसरे तरह के संकटों-मसलन, चीन या पाकिस्तान का हमला या आर्थिक संकट का तो हम मजबूती और बहादुरी से सामना कर लेते हैं। लेकिन जब इस गणतंत्र की बुनियादों पर ही सवाल उठने लगेंगे समस्या व्यापक महत्व की बन जाती है।

-श्री सिंह ने इंडिया टुडे (फरवरी) के वरिष्ठ संपादक शेखर गुप्ता और प्रमुख संवाददाता युवराज घिमिरे से भेंटवार्ता की उसके प्रमुख अंश:

समाचार पत्रों की भूमिका हमारे राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में अत्यंत महत्वपूर्ण रही है और हमेशा रहेगी। आज देश में विकास की गति को तेज करने की जरूरत है, इस गति को अवरूद्ध करने में, कई अड़चनें आती हैं। जैसे बिना किसी समस्या को सोचे समझे उसका विरोध करना। ऐसे में समाचार पत्रों द्वारा तथ्यों की जानकारी प्रस्तुत करने से विकास के अनुकूल वातावरण तैयार करने में मदद मिलती है। ऐसे वातावरण में निर्भीक, निष्पक्ष और तथ्यात्मक समाचार विचार प्रस्तुत करना अपने आप में एक बहुत बड़ा चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। समाचार पत्र सामाजिक दृष्टिकोण के विकास तथा कुरीतियों के उन्मूलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। निरक्षरता को दूर करने का व्यापक अभियान समाचार पत्रों के अधिकतम प्रसार के साथ स्वतः ही होता रहता है।

-अर्जुन सिंह, 27 सितंबर 1992

माया : इस ताजे अभियान से संदेश क्या मिलता है?

सिंह : संदेश देने का अभियान तो कोई नहीं चल रहा है। राजनीतिक यथार्थ को समझकर उसके राष्ट्रीय हित में उपयोग की कोशिश है।

माया : लेकिन आप जो कह रहे हैं, उसका अर्थ यह निकलता है कि ...

सिंह : मैं जो कह रहा हूं, उसके अर्थ से मैं अपरिचित नहीं हूं। आप लोग क्या अर्थ निकाल रहे हैं?

माया : कि भाजपा की ताकत बढ़ी है और कांग्रेस कमजोर हुई है।

सिंह : यह कोई तराजू पर तोलने वाली बात नहीं है, लेकिन जो परिस्थितियां निर्मित हुईं– खास तौर पर मई-जून से 6 दिसम्बर और उसके बाद भी– उसका कांग्रेस पर ही नहीं पूरे देश पर असर पड़ा है। जब धर्म को राजनीति में डाला गया, तो राजनीतिक दलों को भी इससे निपटने के रास्ते सोचने चाहिए। भ्रम फैलाने में भारतीय जनता पार्टी सफल हुई है। इसे नकार कर हम किसी सत्य की सेवा नहीं करेंगे।

माया : केंद्र सरकार और कांग्रेस नेतृत्व के प्रयासों में कमी कहां रह गयी?

सिंह : कमी क्या... प्रयास तो हुए, पर जितने होने चाहिए उतने नहीं हुए। अब उसी कमी को पूरा करने की कोशिश है। फोकस ठीक करने की बात है।

माया : अयोध्या की बात करें तो क्या आपकी राय में केंद्र सरकार ने अयोध्या के मुद्दे पर अपनी जिम्मेदारी का पूरे तौर पर निर्वाह किया?

सिंह : कोशिश तो की थी। सफलता कितनी मिली या कमी कहां रह गयी, यह फैसला तो देश की जनता करेगी। अंततः इतिहास करेगा।

माया : देश की जनता के सामने पूरे तथ्य जब तक नहीं आयेंगे तब तक क्या फैसला होगा?

सिंह : तथ्य तो लाये जा रहे हैं। तथ्यों को छिपाने से तो किसी का भला नहीं होगा। ऐसे कोई तथ्य हैं जो अपनी आत्मा पर बोझ बनें, तो भी उनका सामना करना पड़ेगा।

माया : भारतीय जनता पार्टी से जूझने के वैचारिक रास्ते क्या समाप्त हो गये?

सिंह : उनके पास एक विचार है और हमारे पास दूसरा विचार। दोनों मेल नहीं खाते। अपनी-अपनी विचारधारा की लोकतांत्रिक तरीकों से पुष्टि करवाने की कोशिश की जायेगी। अब यह युद्ध का मैदान तो नहीं है जहां आप बंदूक लेकर खड़े हो जायें।

माया : एक व्यक्ति एक पद के सिद्धांत की बात राव साहब के संदर्भ में ही क्यों की जा रही है? राजीव भी तो दो पदों पर थे।

सिंह : कौन कर रहा है? मैं तो नहीं कर रहा।

माया : मतलब आप राव के दोनों पदों पर रहने के पक्षधर हैं?

सिंह : मैं तो यह कह रहा हूं कि इसका फैसला तो उन्हें खुद ही करना है। इसमें दबाव डालने की बात नहीं है। पार्टी संघर्ष करे, यह जरूरी है। कौन कितने पदों पर है इसका क्या मतलब है।

-साक्षात्कार, माया, 28 फरवरी 1993

अर्जुन सिंह द्वारा उठाए गए मुद्दों में निहित है कांग्रेस की आत्मा

इन दिनों सारी निगाहें अर्जुन सिंह पर टिकी हुई हैं। उनकी प्रत्येक गतिविधि को ध्यानपूर्वक देखा जाता है और उसकी विवेचना होती है। उनके इरादों की परतें खोलने की कोशिश की जाती है। धर्मनिरपेक्षता के लिए उनके तेवर अखबारों की सुर्खियां बनते हैं। उनकी पहचान राजनीति के एक मंजे हुए खिलाड़ी की है और इसलिए ऐसे व्यक्तियों की भी संख्या कम नहीं है जो यह कहते हैं कि वे प्रधानमंत्री श्री पी. वी. नरसिंहराव के नेतृत्व को चुनौती इसलिए दे रहे हैं ताकि उनकी महत्वाकांक्षा के अनुरूप वे श्री राव का स्थान ग्रहण कर सकें। लेकिन यह कहना अधिक न्यायसंगत होगा कि आर. एस. एस., विहिप और भाजपा द्वारा संयुक्त रूप से प्रदर्शित सांप्रदायिकता के खिलाफ वे लगातार संघर्षशील रहे हैं और उन्होंने धर्मनिरपेक्षता के समर्थन में उस समय से झंडा उठा रखा है जब कांग्रेस के भीतर किसी तरह का सत्ता-संघर्ष नहीं था।

उन्नीस सौ उनहत्तर के बाद यह पहला अवसर है जब आदर्शों की तीव्र बहस में कांग्रेस बुरी तरह उलझी है। पहले आर्थिक न्याय और गरीबों- कमजोर वर्गों का विकास कैसे किया जाए, कांग्रेस में बहस के मुद्दे हुआ करते थे। लेकिन अब बहस इस बात को लेकर हो रही है कि सांप्रदायिकता से किस तरह प्रभावी तरीके से निपटा जाए और राष्ट्रीय एकता तथा अखंडता को बनाए रखा जाए। श्रीमती इंदिरा गांधी ने प्रिवीपर्स समाप्त किए और बैंकों का राष्ट्रीकरण किया जिसके फलस्वरूप कांग्रेस का विभाजन हुआ। वे दो वर्षों तक अल्पसंख्यक सरकार की प्रमुख रहीं और १९७१ में अपनी लड़ाई को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने 'गरीबी हटाओ' का नारा बुलंद किया। श्रीमती इंदिरा गांधी में गरीबों ने आशा की किरण देखी और अपनी पार्टी के भीतर समाजवादी धरातल पर श्रीमती इंदिरा गांधी एक निर्विरोध नेता के रूप में स्थापित हुईं।

वर्तमान में लोकसभा में कांग्रेस के पास बहुमत नहीं है और उसका अस्तित्व इस बात पर टिका हुआ है कि वह सांप्रदायिकता के विरुद्ध अपनी लड़ाई कितने प्रभावशाली तरीके से आगे बढ़ाती है। इस तरह पार्टी के भीतर धर्मनिरपेक्षता एक प्रमुख मुद्दे के रूप में उभरी है और अर्जुनसिंह ने कांग्रेस के शीर्ष नेतृत्व को स्थिति का आकलन करते हुए इस पर विचार करने के लिए बाध्य कर दिया है।

उनका उद्देश्य

लक्षण तो यही दिखाई दे रहे हैं कि मध्यप्रदेश का यह राजनेता अपने प्रयासों में सफल हो रहा है। यहां तक कि ऐसे लोग भी, जो उनके परंपरागत विरोधी रहे हैं, इस मुद्दे पर अर्जुन सिंह में किसी तरह की त्रुटि या गलती को तलाशने में कठिनाई महसूस कर रहे हैं।

इसमें सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि न तो अर्जुन सिंह के समर्थक और न उनके विरोधी ऐसी कोई संभावना मान रहे हैं कि पार्टी इस मुद्दे पर विभाजित हो जाएगी।

राज्यसभा सदस्य श्री अजीत जोगी अर्जुनसिंह के बहुत नजदीक माने जाते हैं। वे यह बात बहुत जोर देकर कहते हैं कि अर्जुनसिंह प्रधानमंत्री श्री राव या अन्य के साथ कोई व्यक्तिगत लड़ाई नहीं लड़ रहे हैं। अर्जुन सिंह मुद्दों पर आधारित लड़ाई लड़ रहे हैं और जो लोग इसे एक संघर्ष या व्यक्तिगत विवाद के रूप में देखते हैं वे असली मुद्दे को अनदेखा कर देते हैं। श्री जोगी का कहना है कि श्री सिंह का उद्देश्य पार्टी को

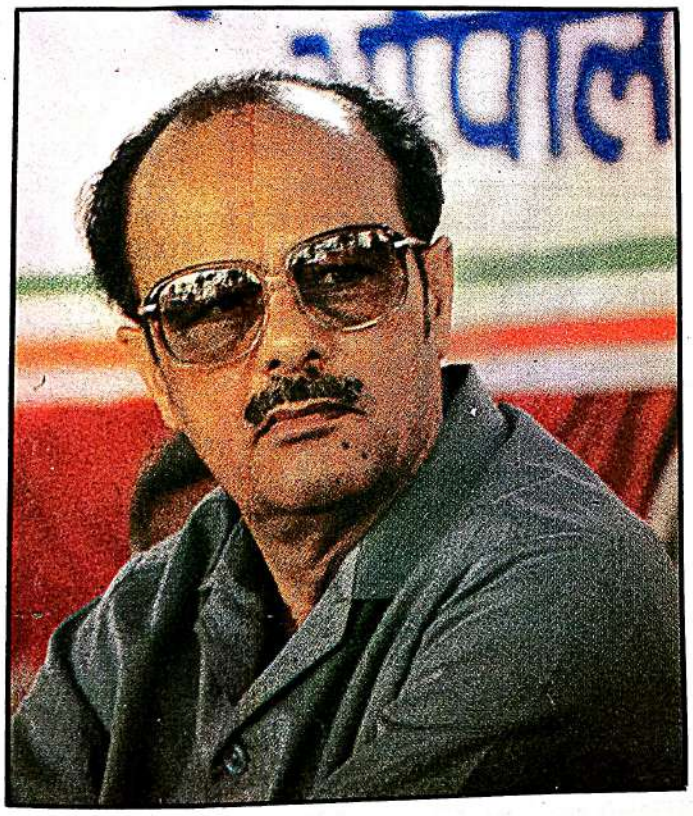

कमजोर नहीं, सुदृढ़ बनाना है। श्री अर्जुनसिंह यह महसूस करते हैं कि जब तक कांग्रेस सामाजिक न्याय और धर्मनिरपेक्षता के अपने मूल आदर्शों के प्रति पुनः समर्पित नहीं होती तब तक वह भाजपा और उसके सहयोगी संगठनों द्वारा दी गई सांप्रदायिक चुनौती का उत्तर देने के लिए आवश्यक संगठनात्मक शक्ति एवम् जन-समर्थन प्राप्त नहीं कर सकेगी।

अर्जुन सिंह का भाजपा -विरोध अथवा धर्मनिरपेक्षता के प्रति निष्ठा अकस्मात् उत्पन्न नहीं हुई है और न वे नरसिंहराव को परेशानी में डालना चाहते हैं। उदाहरण के रूप में १९९० में जब राजीव गांधी कांग्रेस के निर्विवाद अध्यक्ष थे और पार्टी के भीतर किसी तरह का सत्ता-संघर्ष नहीं था, अर्जुनसिंह ने चुनाव आयोग को इस आशय की याचिका लगाई थी जिसमें उन्होंने कहा था कि चूंकि एल. के. आडवाणी की रथयात्रा में भाजपा ने अपने चुनाव-चिन्ह का उपयोग किया है अतः भारतीय जनता पार्टी की मान्यता समाप्त की जाए।

श्री अर्जुन सिंह के निकटस्थ सूत्रों के अनुसार जून १९९१ में लोकसभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के चुनाव को लेकर जब भाजपा और कांग्रेस में सौदेबाजी हुई तो अर्जुन सिंह को बेहद बेचैनी हुई किंतु तब वे इसलिए चुप रहे क्योंकि उन्होंने यह महसूस किया कि राष्ट्रीय मोर्चा और वामपंथी दल जब सहयोग के लिए तैयार नहीं हुए तो कांग्रेस के पास कोई अन्य विकल्प भी नहीं था। किंतु इसने भाजपा के लिए एक खिड़की खोल दी और उसके नेता श्री नरसिंहराव की प्रशंसा के गीत गाते हुए यहां तक कहने लगे कि स्व. लालबहादुर शास्त्री के बाद श्री नरसिंहराव ही देश के सर्वश्रेष्ठ प्रधानमंत्री हैं। सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी और प्रमुख विपक्षी दल, भारतीय जनता पार्टी, के बीच एक समझौते का आभास होने लगा जो सतह पर उभरता दिखाई दिया। दूसरी ओर अयोध्या आंदोलन गंभीर रूप से तेजी से गति पकड़ रहा था किंतु राव इसके प्रति तनिक भी चिंतित दिखलाई नहीं दिए।

तिरुपति में अप्रैल, १९९३ में आयोजित कांग्रेस महा-अधिवेशन में अर्जुन सिंह को जब राजनैतिक प्रस्ताव बनाने के लिए गठित समिति का अध्यक्ष बनाया गया, उन्होंने भाजपा के प्रति सीधा-सच्चा रवैया अपनाने की बात कही। अर्जुनसिंह द्वारा बनाया गया राजनैतिक प्रस्ताव बिना विरोध के पारित हो गया। इस तरह राव के लिये सिवा इसके और कोई चारा शेष नहीं रहा कि वे भी अपने समापन भाषण में भाजपा के प्रति तीखे स्वर अपनायें। इसके अतिरिक्त कांग्रेस कार्यसमिति के चुनाव में सबसे अधिक वोटों के साथ अर्जुनसिंह के निर्वाचित होने पर श्री सिंह एक शक्तिपुंज के रूप में उभरे। इस कारण भी एक खलबली-सी मच गई और अर्जुनसिंह के प्रति शंकाएं व्यक्त की जाने लगीं। तिरुपति के बाद भाजपा के रवैये में भी स्पष्ट रूप से बदलाव आया और विहिप ने जुलाई से कारसेवा की तिथि घोषित कर दी।

अर्जुनसिंह द्वारा २ अगस्त को श्री राव के राजनैतिक सलाहकार जितेंद्र प्रसाद को लिखे गये पत्र का व्यापक प्रचार हुआ किंतु इस तथ्य की जानकारी बहुत कम लोगों को है कि श्री अर्जुनसिंह ने जुलाई में भी एक पत्र श्री राव को लिखा था जिसमें उन्होंने इस बात की चर्चा विस्तार में की थी कि भाजपा किस तेजी से अपना विस्तार कर रही है, उसके लक्ष्य क्या है और हिंदुत्ववादी शक्तियों के लिये किस तरह अनुकूल वातावरण बनता जा रहा है। उन्होंने श्री राव से अनुरोध किया था कि इस स्थिति का सामना करने के लिये पार्टी आवश्यक कदम उठाये। इसके बाद ही २६ जुलाई को कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक बुलाई गई। जहां एक ओर श्री सिंह भाजपा से जूझने के लिये जुझारू रवैया अपनाने की बात कर रहे थे, श्री राव ने विहिप के साधुओं के साथ बातचीत शुरू कर उन्हें राजनैतिक मान्यता देना शुरू कर दिया। इस कारण अयोध्या विवाद से अर्जुनसिंह ने स्वयं को दूर कर लिया। घटनाक्रम बताता है कि तिरुपति में अप्रैल में हुये महाधिवेशन में जिस कांग्रेस ने भाजपा और उसके सहयोगी संगठनों के खिलाफ पूरी दृढ़ता से लड़ाई छेड़ने की बात की थी, दिसंबर माह में बाबरी मस्जिद को ध्वस्त होने से वह नहीं बचा पाई।

अर्जुनसिंह की तात्कालिक रणनीति अब यही दिखाई देती है कि सांप्रदायिकता के खिलाफ जनशक्ति का निर्माण करने के लिये जनसभाओं के आयोजन पर अधिक ध्यान दें। कुछ लोग ऐसा सोचते हैं कि कांग्रेस कार्यसमिति की पिछले दिनों संपन्न बैठक में अर्जुनसिंह को पीछे हटना पड़ा और इसलिये पार्टी के भीतर वे अकेले पड़ गये हैं। कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक के कुछ दिन पहले ही अर्जुनसिंह ने कलकत्ता में एक बयान में कहा था कि कांग्रेस महासमिति का अधिवेशन संसद के बजट सत्र के पहले बुलाया जाये। किंतु कार्यसमिति ने इसे अप्रैल में बुलाने का निर्णय लिया। इसके साथ ही 'एक व्यक्ति-एक पद' का तर्क भी कार्यसमिति द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया-यह कहते हुये कि प्रधानमंत्री इससे ऊपर हैं, सवाल उठता है कि अर्जुनसिंह वास्तव में क्या बाजी हार गये?

उनकी रणनीति

अर्जुनसिंह के समर्थकों का कहना है कि अर्जुनसिंह ने कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक को किसी तरह की लड़ाई का मैदान नहीं बनाया था। इसलिये उनके द्वारा बाजी हारने का सवाल ही उपस्थित नहीं होता। उन्हें मालूम था कि कार्यसमिति की बैठक में संख्या के आधार पर वे जीत नहीं सकते इसलिये उन्होंने अपनी लड़ाई कांग्रेस महासमिति में लड़ने की रणनीति बनाई है। कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक में अपने भाषण के दौरान उन्होंने कहा था कि पूर्व इंका महासचिव श्री के.एन. सिंह और अन्य लोगों की मांग के अनुरूप कांग्रेस महासमिति का अधिवेशन बजट सत्र से पहले बुलाया जाना उपयुक्त होगा। यदि ऐसा करना संभव न हो तो कांग्रेस महासमिति की बैठक मार्च के अंत में अथवा अप्रैल के प्रारंभ में बुलाई जाये। ऐसा कहा जाता है कि राव और उनके समर्थक महासमिति की बैठक को आगे टालना चाहते थे किंतु असंतुष्टों के दबाव के कारण वे ऐसा नहीं कर सके।

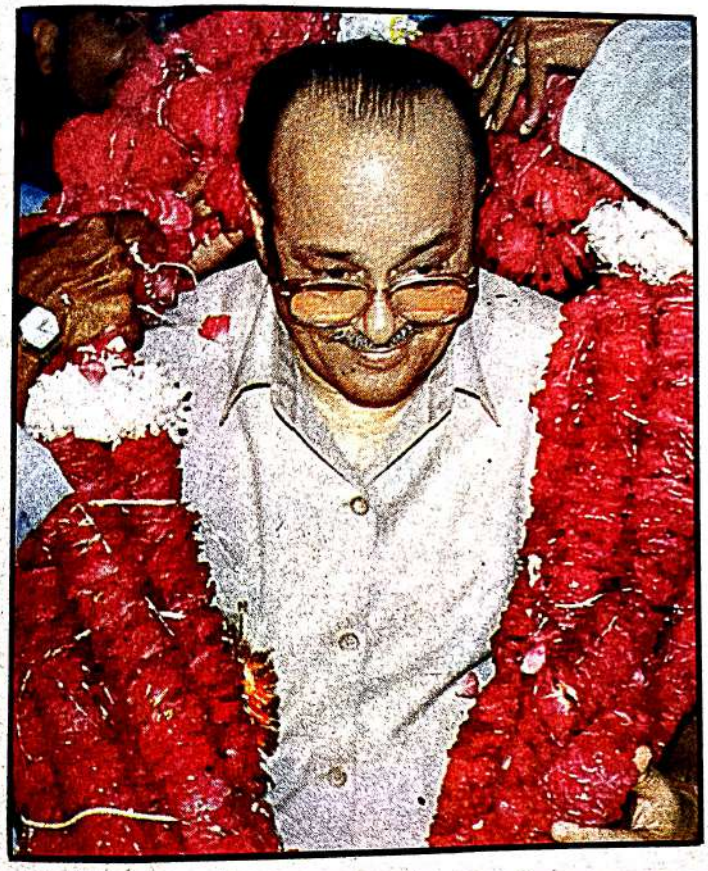

कांग्रेस कार्यसमिति ने अपनी बैठक में न तो नरसिंहराव के नेतृत्व में आस्था व्यक्त करते हुये कोई प्रस्ताव पारित किया और न अर्जुनसिंह की सीधी आलोचना करते हुये प्रस्ताव। यह उल्लेखनीय है कि इसके पहले की कार्यसमिति की बैठक में नरसिंहराव के प्रति विश्वास व्यक्त करने वाला प्रस्ताव अर्जुनसिंह द्वारा ही प्रस्तुत किया गया था। इस बार महाराष्ट्र के मुख्यमंत्रीने अन्य मुख्यमंत्रियों को अर्जुनसिंह की आलोचना करने के लिये अवश्य बाध्य करना चाहा किंतु इसके लिये मुख्यमंत्रीगण तैयार नहीं हुए।

इसके विपरीत बैठक में अर्जुनसिंह द्वारा पेश किये गये दोनों प्रस्ताव निर्विरोध स्वीकार कर लिये गये। एक प्रस्ताव में सांप्रदायिक दलों को निर्वाचन की प्रक्रिया से दूर रखे जाने की आवश्यकता प्रतिपादित की गई थी जबकि दूसरे प्रस्ताव में जवाहरलाल नेहरू, इंदिरा गांधी और राजीव गांधी की परंपरा से जुड़े रहने का आव्हान किया गया था। पहले प्रस्ताव का उद्देश्य भाजपा के प्रति सख्त रवैया अपनाये जाने की लिये पार्टी नेतृत्व को मजबूर करना था जबकि दूसरे प्रस्ताव के जरिये श्री राव के उस भाषण को नकार दिया गया जो उन्होंने वरिष्ठ प्रशासकीय अधिकारियों के बीच दिया था और जिसमें उन्होंने समाजवाद का मखौल उड़ाया था।

इस तरह स्पष्ट है कि कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक से अर्जुनसिंह को अपने उस उद्देश्य को पूरा करने में मदद मिली जिसके जरिये वे यह दिखाना चाहते थे कि कांग्रेस के धर्मनिरेपक्ष और समाजवादी आदर्शों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता बरकरार है जबकि अन्य लोग अपनी प्रतिबद्धता खो बैठे हैं। जैसा कि अर्जुनसिंह के एक सहयोगी ने मुस्कुराते हुये कहा- " श्री अर्जुनसिंह अपनी लड़ाई मुद्दों पर लड़ते हैं। वे एक ऐसा मुद्दा उठा लेते हैं जिस पर वे अपने विरोधी को या तो सहमत होने के लिये मजबूर कर देते हैं अथवा उसे बुरी तरह नंगा कर देते हैं।"

- पायनियर, नई दिल्ली, 14 फरवरी 1993

5 नवम्बर 92 को श्री अर्जुन सिंह के जन्मदिवस पर प्रकाशित लेख के अंश

संक्रमण काल से गुजरती राष्ट्रीय राजनीति जिसमें एकता, धर्मनिरपेक्षता, सामाजिक न्याय जैसे आदर्श तिरोहित हो रहे हैं और वैचारिक ध्रुवीकरण की आड़ में संकीर्ण, साम्प्रदायिक एवं कट्टरपंथी शक्तियां अपने डैने पसार कर स्थापित मूल्यों को चुनौतियां दे रही हैं, ऐसी विषमतर स्थिति में अर्जुन सिंह उन बिरले प्रभावशाली एवं चर्चित नेताओं में से एक हैं, जिनमें धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रवादिता सम्बल तलाश रही है। अर्जुन सिंह का गहन अध्ययन, जन सरोकार का बहुपक्षीय चिंतन, देश और समाज की जीवन्त समस्याओं से गहरी संवेदनाओं के साथ जुड़ाव, प्रशासनिक सूझबूझ और राष्ट्रीय हितों को क्षति पहुंचाने वाली प्रवृत्तियों से निर्णायक रूप से लोहा लेना, उनके बहुआयामी व्यक्तित्व की प्रखर विशेषताएं हैं। इन विशेषताओं ने ही अर्जुन सिंह को निरन्तर गतिशील और विश्वसनीय नेता के रूप में ढालने में अहम् भूमिका निभाई है।

अपने जन्म पर किसी का वश नहीं होता किन्तु जीवन के आदर्शों को सुनिश्चित कर अपनी जमीन से, अपने आसपास के समाज से, उसके उद्वेलन और आकांक्षाओं से सरोकार रखता हुआ जो व्यक्ति अपने जीवन को ढालता है, संवारता है, समस्याओं से भागता नहीं बल्कि अपनी बौद्धिकता के साथ उन समस्याओं से जूझता है, उसकी प्रखरता स्वयं ही अपनी पहचान बना लेती है। यही वे कारण हैं जिनकों अपने जीवन में, विचारों और आचरण में समाहित करते हुए अर्जुन सिंह ने म.प्र. की राजनीति में कदम रखा और निरन्तर गतिशील रहते हुए विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी विश्वसनीयता अक्षुण्ण रखते हुए आज वे राजनीति के आकाश में नित नई ऊंचाइयां छूते जा रहे हैं। यह विश्वसनीयता और नेतृत्व क्षमता अर्जुन सिंह को विरासत में नहीं मिली थी। विरासत में तो उन्हें सामन्ती सुविधायें ही मिलीं थीं और यदि वे चाहते तो उच्च शिक्षा , व्यक्तित्व और सुदृढ़ आर्थिक पृष्ठभूमि के बल पर सरकारी ओहदेदार बन जाते, पर अपनी जमींदारी के रेशमी आवरण के तारों की सुरक्षा में जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा उन्होंने धरती की कठोरता की परवाह किये वगैर माटी की सौंधी महक से जुड़ना पसन्द किया।

जातिवाद, साम्प्रदायिकता और विचारों की संकीर्णता को उनका चेतन मन न तब स्वीकार कर सका था जब वे राजसी सुविधाओं के बीच पल रहे थे और न अब जब राजनीतिक दुरभिसंधियों के ताने-बाने बुने जा रहे हैं और महत्वाकांक्षायें नित नये समीकरणों को बना-बिगाड़ रही हैं। श्रीमती इंदिरा गांधी और राजीव गांधी जैसे कांग्रेस के इतिहास पुरूषों ने उन्हें हमेशा सराहा है और चुनौती की हर कसौटी पर वे सदा खरे उतरे हैं। चाहे वे कोई भी परिस्थितियां क्यों न हों वे अर्जुन सिंह जी को लोकतंत्र की रक्षा के लिये सांप्रदायिकता पर प्रहार करने से कभी नहीं रोक सकीं हैं।

-नवभारत, भास्कर, स्वदेश, देशबंधु व टुडे न्यूज आदि से

एक परिचय

प्रगतिशील भारत की ललक लिये हुये सृजनशील युवा, जो जनमानस को संकीर्णता से उबार कर उसमें आधुनिक भारत के समग्र विकास की भावनायें जागृत करना चाहता है, अपनी लेखनी, वाणी और कर्म से। भारतीय मूल्यों के प्रति पूर्णतः समर्पित व्यक्तित्व, जिसका ईश्वर की असीम सत्ता और उसकी करुणा पर अटूट विश्वास है, पर जो सांप्रदायिकता, संकीर्णता और धार्मिक रूढ़ीवादिता का प्रबल विरोधी है।

अपने पिता श्री गुरूदेव गुप्त पूर्व सांसद से जहां पत्रकारिता उनके रक्त में बही, वहीं मिला उन्हें राजनीति की चमक से आंखें न चौंधिया जाने का कवच, जिसने उन्हें श्रेष्ठ पत्रकार के रूप में ढाला। कामनवेल्थ कांफ्रेंस, नानएलाइन्स् सम्मिट, सार्क, यू.एन.ओ. के सुरक्षा परिषद के सम्मेलन और स्वीट्जरलैंड के वर्ल्ड एकोनोमिक फोरम सम्मेलन आदि के महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में विदेशों में जाकर भाग लेने से उनका व्यक्तित्व बहुआयामी हुआ।

भारत रत्न स्वर्गीय राजीव गांधी ने एक बुद्धिजीवी के रूप में जिन्हें बहुत स्नेह और सम्मान दिया उनके साथ कई विदेश यात्राओं में गये और सांप्रदायिकता की बली वेदी पर राजीव जी की कुर्बानी अब उनके जीवन की पीड़ा है। वे सांप्रदायिकता से लड़ने के लिये संकल्पबद्ध है। स्व. श्री राजीव गांधी पर लिखी उनकी सुप्रसिद्ध पुस्तक "शांति का नया इतिहास" के बाद उनकी यह दूसरी कृति है।

नाम	: मदन मोहन गुप्त
जन्म	: ३१ अक्टूबर १९५३
स्थान	: रीवा, मध्यप्रदेश
सम्प्रति	: पत्रकारिता, संयुक्त सम्पादक दैनिक जागरण, भोपाल–रीवा

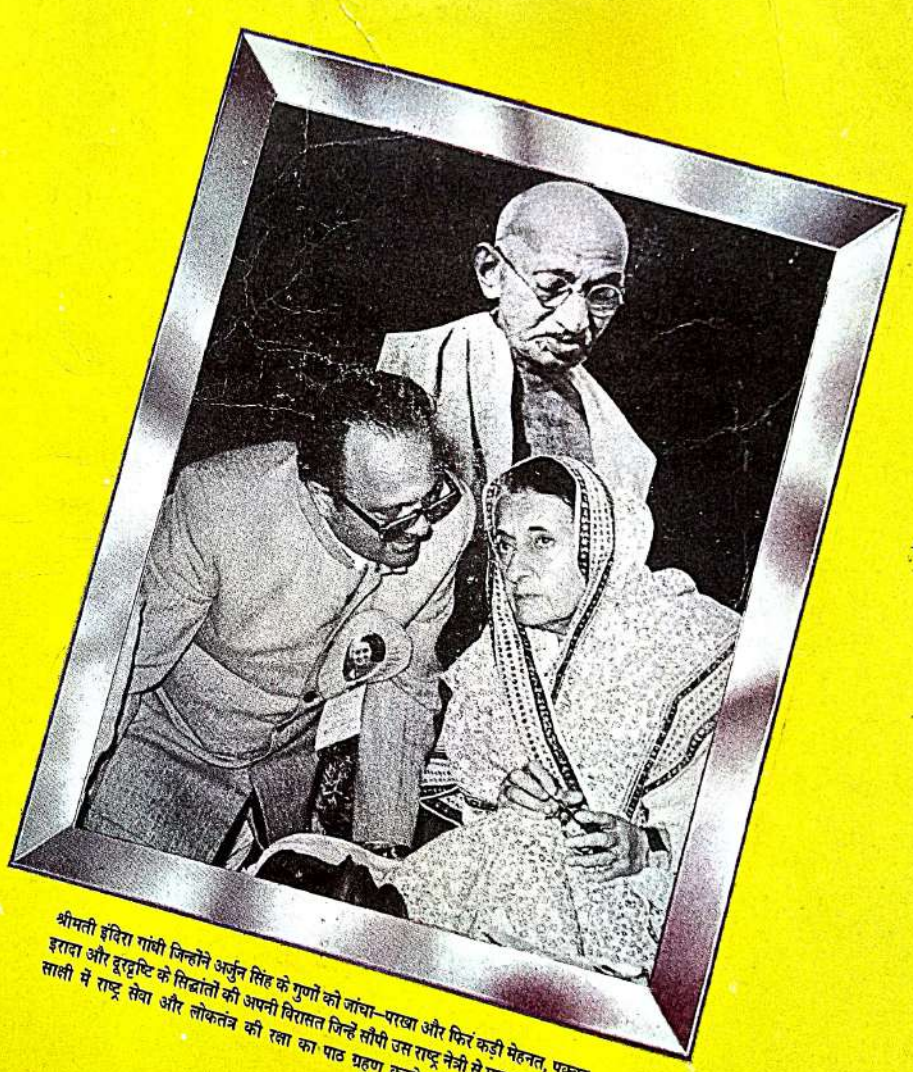

श्रीमती इंदिरा गांधी जिन्होंने अर्जुन सिंह के गुणों को जांचा–परखा और फिर कड़ी मेहनत, पक्का इरादा और दूरदृष्टि के सिद्धांतों की अपनी विरासत जिन्हें सौंपी उस राष्ट्र नेत्री से महात्मा गांधी की साक्षी में राष्ट्र सेवा और लोकतंत्र की रक्षा का पाठ ग्रहण करते हुये अर्जुन सिंह।

भारत रत्न राजीव गांधी जिन्होंने साम्प्रदायिकता के खिलाफ लड़ते हुये अपने जीवन का बलिदान दिया और अब उनके सिपाही के रूप में अर्जुन सिंह इस संघर्ष को जारी रखे हैं अर्जुन सिंह।

भौनीबाबा